



(अर्धवार्षिक, 45वाँ अंक)



उदयाचल

(अप्रैल - सितम्बर, 2026)

राजभाषा पत्रिका



SUPREME AUDIT INSTITUTION OF INDIA

लोकहितार्थ सत्यनिष्ठा

Dedicated to Truth in Public Interest

कार्यालय : प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा) झारखण्ड, राँची

15 अगस्त 2026 की झलकियाँ





(अर्धवार्षिक, 45वाँ अंक)

राजभाषा पत्रिका
अप्रैल-सितम्बर, 2026

पत्रिका परिवार

मुख्य संरक्षक
श्रीमती इन्दु अग्रवाल
प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा)

संरक्षक
श्री विकास कुमार
उप महालेखाकार (प्रशासन)

प्रकाशक परामर्शदातृ समिति

श्रीमती माया कुमारी
उप महालेखाकार (ए.एम.जी.- I एवं वाणिज्यिक)

श्री चंपक रॉय
उप महालेखाकार (ए.एम.जी.- II)

सुश्री अभिरुचि
उप महालेखाकार (ए.एम.जी.- IV)

श्री राजेश कुमार
उप महालेखाकार (ए.एम.जी.- III)

संपादक मंडल

श्री मंजेश परासर
सहायक निदेशक (राजभाषा)
(लेखापरीक्षा)

श्री शैलेन्द्र कुमार
सहायक निदेशक (राजभाषा)
(एल.ए.डी.)

श्रीमती शिप्रा शालिनी आईद
कनिष्ठ अनुवाद अधिकारी

श्री सुबोध कुमार
कनिष्ठ अनुवाद अधिकारी

श्री अमर आनंद मिंज
कनिष्ठ अनुवाद अधिकारी





(अर्धवार्षिक, 45वाँ अंक)

राजभाषा पत्रिका
अप्रैल-सितम्बर, 2026

स्वत्वाधिकारी	:	प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा) झारखण्ड, राँची
प्रकाशन	:	'उदयाचल' (कार्यालय पत्रिका)
	:	प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा), झारखण्ड, राँची
अंक	:	45वाँ
आवरण एवं मुद्रक पत्रिका सज्जा	:	हमारा प्रेस, राँची
आवरण चित्र	:	झारखण्ड के विभिन्न पर्यटन स्थल
मूल्य	:	राजभाषा के प्रति निष्ठा
वितरण	:	राजभाषा अनुभाग



इस पत्रिका में संकलित सभी रचनाओं में रचनाकारों के विचार निजी हैं,
जिनसे उदयाचल परिवार का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

-संपादक मण्डल





मुख्य संरक्षक की कलम से



अत्यंत हर्ष का विषय है कि कार्यालय की हमारी प्रतिष्ठित अर्ध-वार्षिक राजभाषा पत्रिका "उदयाचल" का 45वां अंक आप सभी के समक्ष प्रस्तुत है। कार्यालयीन पत्रिका का इतने लंबे समय तक अनवरत प्रकाशित होना इस बात का प्रमाण है कि हमारे कार्मिकों में सृजनशीलता, भाषा के प्रति अनुराग और अपनी संस्कृति से जुड़ाव अत्यंत प्रगाढ़ है।

"उदयाचल" पत्रिका हमारे कार्मिकों में अंतर्निहित साहित्यिक प्रतिभा, वैचारिक परिपक्वता और रचनात्मकता को एक खुला मंच प्रदान करती है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस अंक में संकलित आलेख, कविताएँ और रचनाएँ न केवल पाठकों का मार्गदर्शन करेंगी, बल्कि उन्हें हिंदी में कार्य करने के लिए भी प्रेरित करेंगी।

इस अंक के प्रकाशन से जुड़े संपादक मंडल, रचनाकारों और सभी कार्मिकों का प्रयास सराहनीय है।

पत्रिका के इस 45वें अंक के सर्वांगीण सफलता की अनंत शुभकामनाओं के साथ!

इन्दु अग्रवाल

इन्दु अग्रवाल
प्रधान महालेखाकार
(लेखापरीक्षा)



संरक्षक की कलम से



हमारी गृह-पत्रिका के इस नए अंक को आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए अत्यंत हर्ष और गर्व की अनुभूति हो रही है। यह पत्रिका हमारे कार्यालय के अधिकारियों और कर्मचारियों की रचनात्मकता, वैचारिक ऊर्जा और प्रशासनिक अनुभवों का एक जीवंत दर्पण है।

केंद्रीय सरकार के सेवा-क्षेत्र में काम करते हुए हमारा यह मुख्य दायित्व है कि हम जन-जन तक सरकार की कल्याणकारी योजनाओं और नीतियों को पहुंचाएं। इस उद्देश्य को पूरा करने में हमारी राजभाषा हिंदी सबसे सशक्त माध्यम है। राजभाषा में किया गया सरल और स्पष्ट कार्य न केवल प्रशासनिक पारदर्शिता को बढ़ाता है, बल्कि आम नागरिकों के साथ हमारे जुड़ाव को भी मजबूत करता है।

यह अत्यंत हर्ष का विषय है कि हमारे कार्यालय के सभी अनुभागों में हिंदी का प्रयोग निरंतर हो रहा है। सरकारी कामकाज को मूल रूप से हिंदी में करने की दिशा में हम तेजी से आगे बढ़ रहे हैं। यह अंक इसी प्रतिबद्धता का प्रतीक है, जिसमें आपको साहित्यिक और समसामयिक रचनाओं का बेहतरीन संगम देखने को मिलेगा।

आशा है कि यह अंक आपके ज्ञानवर्धन के साथ-साथ आपको राजभाषा के प्रति और अधिक समर्पित होने की प्रेरणा देगा। पत्रिका को और अधिक बेहतर बनाने के लिए आपके सुझावों और प्रतिक्रियाओं का हमेशा स्वागत रहेगा।

विकास कुमार
उप महालेखाकार (प्रशासन)



संपादक की कलम से



“उदयाचल” कार्यालय के कार्मिकों की सृजनशीलता का परिचायक है। यह पत्रिका कार्मिकों के विचारों की अभिव्यक्ति है, जिसके माध्यम से वे अपनी कल्पनाओं को आकार देते हैं। यह अभिव्यक्ति किसी भी व्यक्ति के लिए और भी सरल हो जाती है जब अभिव्यक्ति का माध्यम अपनी भाषा होती है, जिसमें हम अनायास ही सहज रूप से सोचते हैं या अपनों से बात करते हैं। अंग्रेजी अथवा अन्य कोई भी भाषा सीखना या जानना व्यक्तित्व के उन्नयन के लिए सहायक हो सकता है, परंतु यह तभी संभव है जब हमें अपनी भाषा का ज्ञान हो। मातृभाषा व्यक्ति के बौद्धिक व तार्किक क्षमता के साथ-साथ संपूर्ण व्यक्तित्व को एक आकार देती है, जो व्यक्ति को जीवन के सभी संघर्षों व अपेक्षाओं के लिए तैयार करती है। मातृभाषा की पहली कक्षा घर से प्रारंभ होती है, अतः आवश्यक है कि हम बच्चों से अपनी मातृभाषा में ही बात करें, जो उन्हें अनायास ही प्रारंभिक शिक्षा, मूल्य आदि प्रदान करती है।

ठीक उसी प्रकार हिंदी, जो संपूर्ण देश को जोड़ने वाली भाषा है, को जानना आवश्यक है, यदि आप अपने देश से जुड़ने की इच्छा रखते हैं। हिंदी एक सुसमृद्ध भाषा है जो देश की पहचान है तथा हमारे देश में बोली जाने वाली सभी भाषाओं से समृद्ध होती है और उनका नेतृत्व भी करती है। हिंदी के माध्यम से हम अपनी सोच व विचारों को सहजता से आमजन तक पहुँचा सकते हैं। अंग्रेजी व अन्य विदेशी भाषाओं की जानकारी अच्छी बात है, लेकिन उनमें हिंदी जैसा अपनत्व नहीं मिल सकता। हिंदी दिलों को जोड़ती है, हिंदी सभी भाषाओं की सहेली है। हिंदी एवं देश की अन्य भाषाएँ एक-दूसरे की पूरक हैं। अपनी भाषाएँ भाव व विचार दोनों को संप्रेषित करती हैं।

“उदयाचल” की रचनाएँ आपको रचनाकार के विचारों के साथ-साथ भावों को भी अभिव्यक्त करेंगी। आशा है आप सभी को उदयाचल का यह अंक अवश्य पसंद आएगा।

“उदयाचल” के सभी रचनाकारों व संपादक मंडल के सदस्यों को पत्रिका के सफल व सतत् प्रकाशन की हार्दिक शुभकामनाएँ।

डॉ. मंजेश परासर

सहायक निदेशक (रा.भा.)

लेखापरीक्षा



अनुक्रमणिका

क्र.सं	शीर्षक	रचनाकार (सर्वश्री)	पृ. सं.
01	एक पथिक	विकास कुमार	07
02	मुनि-बॉन्ड	कुंदन कुमार	08
03	बोकारो इस्पात संयंत्र : झारखण्ड एवं भारत के औद्योगिक विकास का आधार	निरंजन कुमार नं. 2	10
04	गृहिणी : घर की आत्मा और परिवार की शक्ति	अभिषेक कुमार नं. 1	14
05	मेरी पहली पोस्टिंग : देहरादून	संजना गुप्ता	17
06	समय की नदी	रुचि साराह मिंज	20
07	आईनों के शहर में...	शेखर कुमार राय	22
08	नाम की खोज	मुकेश कुमार नं. 1	23
09	उधार : मदद, भरोसा या त्याग?	किशोर कुमार राही	27
10	आँख जब खुली	बिनोद कुमार प्रभात	32
11	गुलमोहर के फूल	सुनैना कुमारी	35
12	नवादा जिला	राहुल रंजन	36
13	कर्म और भाग्य	बीरेन्द्र यादव	37
14	दो युगों के संधिकाल पर खड़ा भारत	सोनू कुमार सिंह	38
15	भारत की परमाणु यात्रा	नितेश कुमार	42
16	एक दौर बचपन का	शम्भु शरण भारती	46
17	लोक खेलों की लोकप्रियता में बदलाव	चन्द्र भूषण कुमार	47
18	फलसफ़ा-1	अशोक कुमार बरुआ	51
19	बीस लाख की दुकान	ममता	52



एक पथिक

आज जब मैं इस पत्रिका के इन पृष्ठों पर अपने भाव-उद्गार को शब्दों में पिरोने का प्रयास कर रहा हूँ तो अनायास ही विस्मृति के गर्भ से 'उदयाचल' की यात्रा का एक पथिक रूप में अनेक बातें-यादें प्रकट होने लगी हैं। 'उदयाचल' का प्रवेशांक-प्रथम अंक जुलाई 1990 ई० में तत्कालीन कार्यालय-महालेखाकार (लेखापरीक्षा)-II, बिहार, राँची की अर्धवार्षिक पत्रिका के रूप में 'उदयाचल' परिवार की ओर से भूतपूर्व महालेखाकार श्री संतोष कुमार फ्रांसिस कुजूर के संरक्षण में प्रकाशित हुआ था। इसमें छपी प्रसिद्ध हिंदी कवि सोहनलाल द्विवेदी की ये अमर पंक्तियाँ आज भी जेहन में हैं —

मैं निशा बनकर तुम्हें सोने न दूँगा,
मैं उषा बनकर जगाने आ रहा हूँ,
आज अस्ताचल तुम्हें जाने न दूँगा,
अरुण उदयाचल सजाने आ रहा हूँ।

तत्कालीन भारत के नियंत्रक एवं महालेखापरीक्षक श्री सी. जी. सोमैया ने इस पत्रिका के मंगलमय भविष्य हेतु हार्दिक शुभकामनाएँ प्रकट करते हुए अपने संदेश में इसे राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार हेतु एक सराहनीय प्रयास बताया था।

वास्तव में यह समवेत प्रयास और साधना का प्रतिफल है कि हम 'उदयाचल' के 45 वें अंक के प्रकाशन पर गौरवान्वित महसूस कर रहे हैं। इस साधना यात्रा में प्रथम संपादक श्री लल्लन ठाकुर, भूतपूर्व लेखापरीक्षा अधिकारी से प्रारंभ कर श्री जनार्दन प्रसाद, श्री मिथिलेश अकेला, श्री श्याम सुन्दर पाण्डे और श्री अजय कुमार जैसे साहित्य मर्मज्ञ वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारियों के कुशल संपादन में यह पत्रिका निरन्तर अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर हो कर

अनेक कीर्तिमान स्थापित की। आज राजभाषा अधिकारियों के कुशल संपादन में अपने उत्कृष्ट रूप में है। इसके प्रारंभिक दौर के लेखकों, कहानीकारों में आज भी श्री बांके बिहारी शर्मा, मो० ताहा के नाम अग्रगण्य हैं। वहीं कवियों में श्री मिथिलेश अकेला, श्री शशी भूषण मिश्र, श्री अमिताभ राहा, श्री गणेश सिंह 'विष्णुपुरी' आदि को भुलाना असंभव है।



विकास कुमार,
उप महालेखाकार (प्रशासन)

यह उस दौर के संपादक श्री जनार्दन प्रसाद का मुझ पर अतिशय अनुराग था कि उन्होंने मेरी रचनाओं को इन पत्रिका के अंकों में जगह दी। मैं अभी जून 1990 को ही इस कार्यालय में योगदान दिया था। आज जब मैं बीते साढ़े तीन दशकों को याद करता हूँ तो मन भाव-विभोर हो जाता है। जीवन की नश्वरता एक अटूट सत्य है, तो पन्नों में सिमटी काले अक्षरों की अमिटता भी अकाट्य है। मैं उन सभी महानुभावों को श्रद्धा-सुमन अर्पित करना चाहता हूँ जो मेरे प्रेरक व्यक्तित्व बने। पथ प्रदर्शक बने तथा जिनसे कुछ सराहना भी पायी।

'उदयाचल' की इस विकास यात्रा में पुनः स्वयं को जोड़ मैं सौभाग्यशाली मानता हूँ। सरकारी सेवा के अब अस्ताचल गामी मोड़ पर पुनः जीवन क्षितिज पर नयी स्वर्णिम अरुणिमा की ओर देखता हूँ। राजभाषा हिन्दी की प्राण-प्रतिष्ठा चहुँ ओर देखता हूँ। झारखण्ड की धरा पर 'उदयाचल' की किरणों से हमारे कार्यालय-प्रांगण नित्य सज्जित सुशोभित रहे, इसी प्रत्याशा में — एक पथिक।



मुनि-बॉन्ड

म्युनिसिपल बॉन्ड शहरी स्थानीय निकाय (नगरपालिका) के द्वारा जारी किया जाने वाला एक प्रकार का ऋण पत्र है। म्युनिसिपल बॉन्ड को 'मुनि-बॉन्ड' के नाम से भी जाना जाता है। म्युनिसिपल बॉन्ड सड़क, जलापूर्ति परियोजनाएँ, सीवरेंज एवं ड्रेनेज, सड़क एवं पुल निर्माण, शहरी परिवहन, टोल, अस्पताल, ठोस अपशिष्ट प्रबंधन जैसी बुनियादी ढांचा परियोजनाओं के विकास के लिए जारी की जाती है। म्युनिसिपल बॉन्ड शहरी स्थानीय निकायों को आत्मनिर्भर बनाते हैं और राज्य/केंद्र पर निर्भरता कम करते हैं। मुनि-बॉन्ड की एक निश्चित परिपक्वता तिथि (3 से 10 वर्ष की अवधि) और निश्चित ब्याज वाले निवेश (कूपन दर 7.15 से 10.23 प्रतिशत प्रति वर्ष) होती है। यह निवेशकों के लिए सुरक्षित आय का स्रोत है। मुनि-बॉन्ड से प्राप्त होने वाले आय कर-मुक्त होते हैं।

हमारे देश में शहरी स्थानीय निकायों की कुल वित्तीय जरूरत का केवल एक प्रतिशत हिस्सा ही म्युनिसिपल बॉन्ड के ज़रिए पूरा किया जाता है जबकि अमेरिका में मुनि-बॉन्ड नगर निगमों के वित्तीय स्रोत का दस प्रतिशत हिस्सा है। मुनि-बॉन्ड को इंडिया बॉन्ड या अन्य वित्तीय प्लेटफार्म से खरीदा जा सकता है। म्युनिसिपल बॉन्ड मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं :

सामान्य दायित्व मुनि-बॉन्ड : ये बॉन्ड किसी इलाके में मौजूदा बुनियादी ढांचे को बेहतर बनाने के इरादे से शहरी स्थानीय निकाय द्वारा जारी किए जाते हैं। ये शहर के सामान्य राजस्व (टैक्स) से चुकाए जाने वाला बॉन्ड है।

राजस्व मुनि-बॉन्ड : ये बॉन्ड किसी नई इमारत या नई परियोजनाओं के लिए जारी किए जाते हैं। राजस्व मुनि-बॉन्ड विशेष परियोजनाओं से होने वाली कमाई (जैसे-टोल) से चुकाए जाते हैं।

भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड (सेबी) द्वारा मुनि-बॉन्ड जारी करने और सूचीबद्ध करने के लिए संपूर्ण दिशानिर्देश (मार्च 2015) म्युनिसिपल बॉन्ड्स की

नियामक के द्वारा जारी किया गया है। एनएसई इंडिसेस लिमिटेड ने 2023 में भारत का पहला मुनि-बॉन्ड इंडेक्स लॉन्च किया, जिसे निफ्टी इंडिया 'म्युनिसिपल बॉन्ड इंडेक्स' कहा गया। सेबी ने मुनि-बॉन्ड जारी करने के दिशा-निर्देश में कहा है कि शहरी स्थानीय निकाय



कुंदन कुमार
वरि. लेखापरीक्षा अधिकारी

के पास (i) पिछले तीन वर्षों में नकारात्मक नेटवर्थ नहीं होनी चाहिए। (ii) बैंक या गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनी से लिए गए ऋण प्रतिभूतियों और ऋणों के पुनर्भुगतान में कोई चूक नहीं होनी चाहिए। (iii) ऋण साधनों के संबंध में ब्याज और मूलधन के पुनर्भुगतान में चूक नहीं होना चाहिए।

भारत में बेंगलुरु नगर निगम द्वारा पहला म्युनिसिपल बॉन्ड जारी किया गया था (1997)। भारत में मुनि-बॉन्ड से अब तक 23 से अधिक निगमों (सबसे बड़ा बॉन्ड ग्रेटर हैदराबाद म्युनिसिपल कॉरपोरेशन) से लगभग ₹ 6,252 करोड़ (जल आपूर्ति सुविधाओं के लिए सबसे अधिक) से अधिक की पूंजी जुटाई गई है।

सरकारी प्रतिभूतियों के विपरीत, ये बॉन्ड AAA क्रेडिट रेटिंग वाले नहीं हैं। क्रेडिट BBB+ रेटिंग (क्रेडिट रेटिंग एजेंसी के द्वारा जारी) या अधिक वाले शहरी स्थानीय निकाय म्युनिसिपल बॉन्ड जारी कर सकते हैं। भारत में अब तक मुनि-बॉन्ड जारी करने वाले शहरी स्थानीय निकाय क्रमशः बेंगलुरु, अहमदाबाद, नासिक, नागपुर, पुणे, हैदराबाद, इंदौर, भोपाल, लखनऊ, गाजियाबाद आदि हैं।

झारखण्ड के किसी भी शहरी स्थानीय निकाय द्वारा अब तक मुनि-बॉन्ड जारी नहीं किया गया है। झारखण्ड के स्थानीय निकायों में केवल रांची नगर निगम को मुनि-बॉन्ड जारी करने के लिए क्रेडिट रेटिंग एजेंसी के द्वारा क्रेडिट रेटिंग BBB+ प्रदान किया गया है। परन्तु, रांची नगर निगम द्वारा अब तक (जनवरी 2026) मुनि-बॉन्ड जारी नहीं





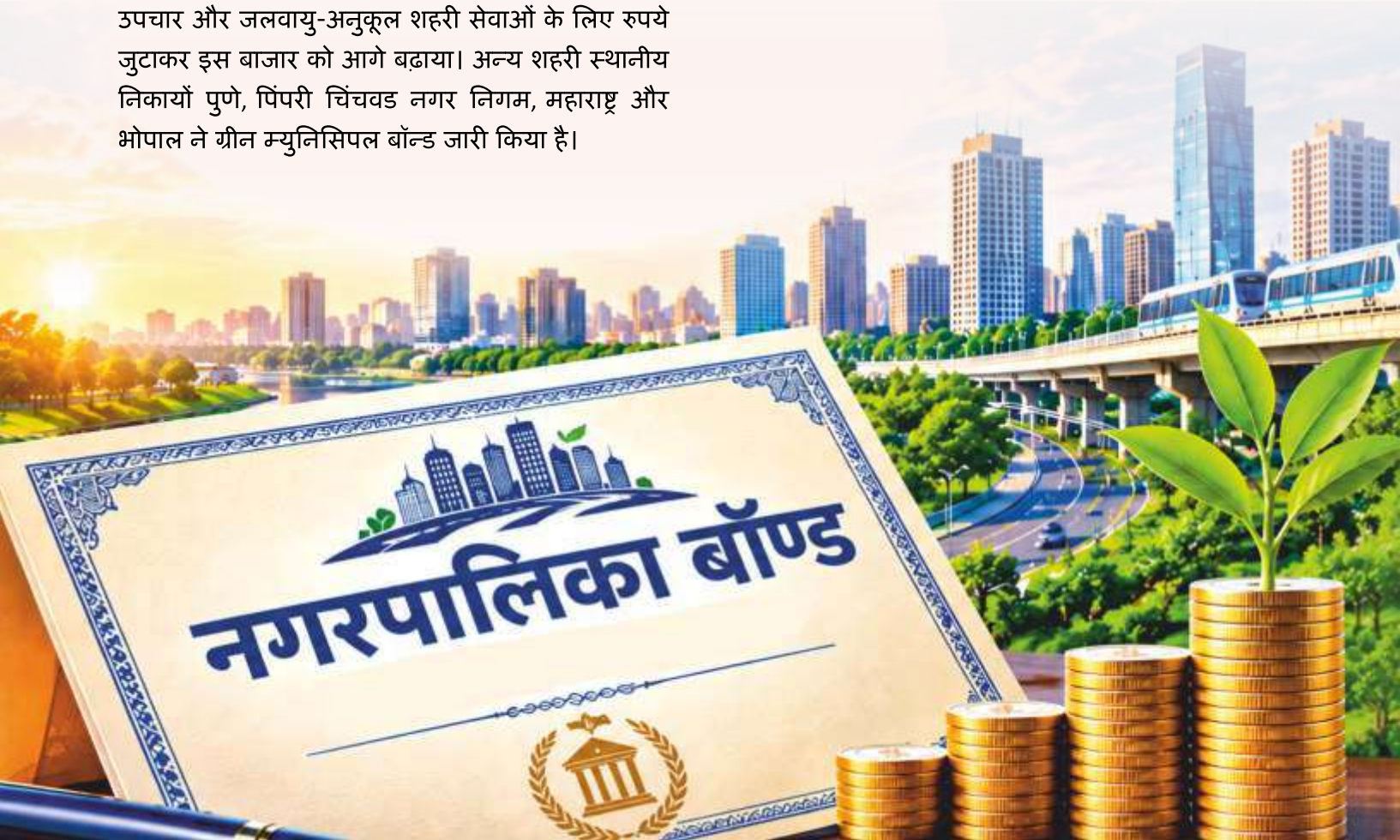
किया गया है।

ग्रीन म्युनिसिपल बॉन्ड : भारतीय संविधान के अनुच्छेद 243W शहरी स्थानीय निकायों को जल आपूर्ति, स्वच्छता और अपशिष्ट प्रबंधन की जिम्मेदारी प्रदान करता है, जिससे उन्हें बॉन्ड जारी करने की पात्रता मिलती है। शहरी स्थानीय निकाय द्वारा ग्रीन म्युनिसिपल बॉन्ड, पर्यावरण के अनुकूल परियोजनाओं के लिए धन जुटाता है।

गाज़ियाबाद नगर निगम ने सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट के लिए, पहला ग्रीन म्युनिसिपल बॉन्ड (₹ 150 करोड़) जारी किया था। इंदौर ने 2023 में 60 मेगावाट के सौर ऊर्जा संयंत्र के लिए ₹ 244 करोड़ का ऐतिहासिक बॉन्ड जारी कर नवीकरणीय ऊर्जा वित्तपोषण के लिए एक मिसाल कायम की। अहमदाबाद और वडोदरा ने फरवरी 2024 में जल उपचार और जलवायु-अनुकूल शहरी सेवाओं के लिए रुपये जुटाकर इस बाजार को आगे बढ़ाया। अन्य शहरी स्थानीय निकायों पुणे, पिंपरी चिंचवड नगर निगम, महाराष्ट्र और भोपाल ने ग्रीन म्युनिसिपल बॉन्ड जारी किया है।

भारत सरकार के अमृत योजना के तहत पहली बार मुनि-बॉन्ड जारी करने वाले शहरी स्थानीय निकाय को प्रति ₹ 100 करोड़ के मुनि-बॉन्ड जारी करने पर ₹ 13 करोड़ (अधिकतम सीमा ₹ 26 करोड़) तक का प्रोत्साहन के रूप में दिया जाने का प्रावधान किया गया है।

केंद्रीय-बजट 2026-27 में नगर निगम बॉन्ड (201 नगर निगम के विश्लेषण के आधार पर) को प्रोत्साहित करने के लिए ₹ 1000 करोड़ से अधिक के एकल बॉन्ड निर्गमन पर शहरी स्थानीय निकाय को ₹ 100 करोड़ के प्रोत्साहन का प्रस्ताव है। भारतीय बैंक म्युनिसिपल बॉन्ड के प्रमुख निवेशक होते हैं। अब बैंक मुनि-बॉन्ड को खरीदकर, उन्हें स्टैच्यूटरी लिक्विडिटी रेशियो (एस-एल-आर) के रूप में इस्तेमाल कर सकते हैं।



राष्ट्रभाषा हिंदी का किसी क्षेत्रीय भाषा से कोई संघर्ष नहीं है। - अनंत गोपाल शेवड़े





बोकारो इस्पात संयंत्र : झारखण्ड एवं भारत के औद्योगिक विकास का आधार

भारत को प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध देशों में गिना जाता है। यहाँ लौह अयस्क, कोयला, चूना पत्थर, मैंगनीज तथा अन्य खनिजों के विशाल भंडार उपलब्ध हैं। इन संसाधनों का उपयोग कर देश ने स्वतंत्रता के पश्चात् औद्योगिक विकास की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। इस विकास यात्रा में इस्पात उद्योग की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है, क्योंकि इस्पात किसी भी राष्ट्र के औद्योगिक एवं आर्थिक विकास की रीढ़ माना जाता है। रेल, सड़क, पुल, भवन, बिजली परियोजनाएँ, रक्षा उपकरण, ऑटोमोबाइल, जहाज निर्माण, मशीनरी तथा आधारभूत संरचना के लगभग प्रत्येक क्षेत्र में इस्पात की आवश्यकता होती है। इस कारण किसी भी विकसित राष्ट्र की प्रगति का आकलन उसकी इस्पात उत्पादन क्षमता से भी किया जाता है।

भारत में सार्वजनिक क्षेत्र के एकीकृत इस्पात संयंत्रों की स्थापना का उद्देश्य केवल इस्पात उत्पादन बढ़ाना नहीं था, बल्कि क्षेत्रीय विकास, रोजगार सृजन, सामाजिक परिवर्तन तथा आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देना भी था। इन्हीं उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए झारखण्ड (तत्कालीन बिहार) के बोकारो जिले में बोकारो इस्पात संयंत्र की स्थापना की गई। यह संयंत्र आज देश के सबसे बड़े एवं आधुनिक एकीकृत इस्पात संयंत्रों में से एक है तथा स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड (सेल) की प्रमुख इकाइयों में शामिल है।

बोकारो इस्पात संयंत्र की स्थापना की पृष्ठभूमि-

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत मुख्यतः कृषि आधारित अर्थव्यवस्था वाला देश था। औद्योगिक आधार अत्यंत सीमित था तथा भारी उद्योगों का अभाव था। स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने भारी उद्योगों को "आधुनिक भारत के मंदिर" की संज्ञा दी। उनका विश्वास था कि यदि भारत को आत्मनिर्भर बनाना है, तो उसे इस्पात, ऊर्जा, मशीन निर्माण तथा भारी इंजीनियरिंग जैसे क्षेत्रों में आत्मनिर्भर होना होगा।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के दौरान सार्वजनिक क्षेत्र में बड़े इस्पात संयंत्र स्थापित करने का निर्णय लिया गया। इसी क्रम में भिलाई, राउरकेला तथा दुर्गापुर इस्पात संयंत्रों की

स्थापना हुई। इनके बाद बढ़ती राष्ट्रीय मांग को देखते हुए एक और विशाल इस्पात संयंत्र की आवश्यकता महसूस की गई, जिसके परिणामस्वरूप बोकारो इस्पात संयंत्र की योजना बनी। बोकारो को इस्पात संयंत्र के लिए चुनने के पीछे अनेक भौगोलिक, आर्थिक तथा तकनीकी कारण थे:-



निरंजन कुमार नं.2
सहा. लेखापरीक्षा अधिकारी

1. लौह अयस्क की उपलब्धता

सिंहभूम क्षेत्र भारत के सबसे समृद्ध लौह अयस्क क्षेत्रों में से एक है। यहाँ से उच्च गुणवत्ता का लौह अयस्क अपेक्षाकृत कम दूरी पर उपलब्ध था।

2. कोयले की प्रचुरता

झरिया, बोकारो तथा करनपुरा कोयला क्षेत्र विश्व के प्रमुख कोकिंग कोयला क्षेत्रों में गिने जाते हैं। इस्पात उद्योग में कोकिंग कोयला अत्यंत आवश्यक होता है।

3. जल की उपलब्धता

दामोदर नदी एवं तेनुघाट परियोजना से संयंत्र को पर्याप्त



हिंदी ही भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है। - वी. कृष्णस्वामी अय्यर





जल उपलब्ध कराया जा सकता था।

4. परिवहन सुविधा

ग्रेड कॉर्ड रेलवे लाइन तथा राष्ट्रीय राजमार्गों से बोकारो देश के प्रमुख औद्योगिक नगरों से जुड़ा हुआ था।

5. भूमि की उपलब्धता

विशाल क्षेत्रफल में संयंत्र, आवासीय कॉलोनियाँ, विद्यालय, अस्पताल तथा अन्य आधारभूत सुविधाओं के विकास हेतु पर्याप्त भूमि उपलब्ध थी।

इन सभी कारणों ने बोकारो को एक आदर्श औद्योगिक स्थल बना दिया।

सोवियत संघ का सहयोग-

प्रारंभिक वर्षों में भारत ने इस परियोजना के लिए विभिन्न देशों से तकनीकी सहयोग प्राप्त करने का प्रयास किया। अंततः तत्कालीन सोवियत संघ ने इस परियोजना के निर्माण, तकनीकी सहायता, मशीनरी, प्रशिक्षण तथा वित्तीय सहयोग प्रदान किया।

भारत और सोवियत संघ के सहयोग का यह एक उत्कृष्ट उदाहरण था। इस सहयोग ने भारत की औद्योगिक क्षमता को नई दिशा प्रदान की तथा सार्वजनिक क्षेत्र के विकास को मजबूती दी।

निर्माण एवं प्रारंभिक विकास

1960 के दशक में संयंत्र का निर्माण कार्य प्रारंभ हुआ। यह अपने समय की सबसे बड़ी औद्योगिक परियोजनाओं में से एक थी। विशाल ब्लास्ट फर्नेस, कोक ओवन, सिंटर प्लांट, स्टील मेल्टिंग शॉप तथा रोलिंग मिलों का निर्माण चरणबद्ध तरीके से किया गया।

निर्माण कार्य में हजारों इंजीनियरों, वैज्ञानिकों, तकनीशियनों तथा श्रमिकों ने योगदान दिया। भारत के विभिन्न राज्यों से विशेषज्ञ यहाँ आए। इससे बोकारो एक बहुसांस्कृतिक औद्योगिक नगर के रूप में विकसित हुआ।

बोकारो नगर का विकास

किसी भी बड़े उद्योग की सफलता केवल उसके उत्पादन तक सीमित नहीं होती, बल्कि उसके आसपास विकसित होने वाले सामाजिक एवं आर्थिक परिवेश से भी मापी जाती है। बोकारो इस्पात संयंत्र के साथ-साथ एक सुव्यवस्थित नगर की भी योजना बनाई गई। चौड़ी सड़कें, पार्क, विद्यालय, अस्पताल, खेल परिसर, सामुदायिक केंद्र,

जलापूर्ति, विद्युत व्यवस्था तथा आधुनिक आवासीय कॉलोनिनों का निर्माण किया गया। आज बोकारो देश के सबसे योजनाबद्ध औद्योगिक नगरों में गिना जाता है।

बोकारो एक एकीकृत इस्पात संयंत्र है।

इसका अर्थ है कि यहाँ लौह अयस्क से लेकर तैयार इस्पात उत्पाद तक की सम्पूर्ण प्रक्रिया एक ही परिसर में सम्पन्न होती है।

मुख्य चरण निम्नलिखित हैं-

- क. लौह अयस्क का प्रसंस्करण
- ख. ब्लास्ट फर्नेस में हॉट मेटल उत्पादन
- ग. हॉट रोलिंग
- घ. कोक निर्माण
- ङ. स्टील मेल्टिंग
- च. कोल्ड रोलिंग
- छ. सिंटर निर्माण
- ज. निरंतर ढलाई
- झ. फिनिशिंग एवं गुणवत्ता परीक्षण

इस प्रकार उत्पादन लागत कम होती है तथा गुणवत्ता पर बेहतर नियंत्रण रखा जा सकता है।

तकनीकी आधुनिकीकरण

समय के साथ वैश्विक प्रतिस्पर्धा बढ़ी। इसके अनुरूप बोकारो इस्पात संयंत्र में निरंतर आधुनिकीकरण किया गया। प्रमुख सुधारों में उच्च क्षमता वाले ब्लास्ट फर्नेस, स्वचालित गुणवत्ता परीक्षण, प्रदूषण नियंत्रण उपकरण, निरंतर ढलाई प्रणाली, कंप्यूटर आधारित नियंत्रण प्रणाली, ऊर्जा संरक्षण तकनीक, आधुनिक रोलिंग मिलें, अपशिष्ट ऊष्मा का पुनः उपयोग शामिल हैं।

इन सुधारों से उत्पादन क्षमता, गुणवत्ता तथा ऊर्जा दक्षता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई।

उत्पादन एवं प्रमुख उत्पाद

बोकारो इस्पात संयंत्र मुख्यतः फ्लैट स्टील उत्पादों के निर्माण के लिए प्रसिद्ध है। इसके प्रमुख उत्पाद हॉट रोल्ड कॉयल, कोल्ड रोल्ड कॉयल, स्टील प्लेट, शीट, कॉइल, पाइप निर्माण हेतु स्टील, ऑटोमोबाइल उद्योग हेतु स्टील, एलपीजी सिलेंडर ग्रेड स्टील, रेलवे एवं रक्षा क्षेत्र के लिए विशेष इस्पात हैं। इन उत्पादों का उपयोग ऑटोमोबाइल,





रेलवे, ऊर्जा, निर्माण, रक्षा, तेल एवं गैस, घरेलू उपकरण तथा अवसंरचना परियोजनाओं में किया जाता है।

बोकारो इस्पात संयंत्र का झारखण्ड एवं भारत पर प्रभाव

बोकारो इस्पात संयंत्र ने झारखण्ड की अर्थव्यवस्था को नई दिशा और गति प्रदान की। झारखण्ड खनिज संसाधनों से समृद्ध होने के बावजूद लंबे समय तक मुख्यतः कच्चे खनिजों के उत्पादन तक सीमित था। बोकारो इस्पात संयंत्र की स्थापना के बाद इन संसाधनों का स्थानीय स्तर पर मूल्य संवर्धन संभव हुआ। इससे राज्य की औद्योगिक क्षमता में वृद्धि हुई तथा खनिज-आधारित अर्थव्यवस्था को एक संगठित औद्योगिक स्वरूप मिला।

संयंत्र के संचालन से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से हजारों लोगों को रोजगार मिला। इसके अतिरिक्त परिवहन, निर्माण, मशीन मरम्मत, खानपान, सुरक्षा, सफाई, ठेका सेवाएँ, छोटे उद्योग तथा व्यापारिक प्रतिष्ठानों का भी तेजी से विस्तार हुआ। परिणामस्वरूप, बोकारो और आस-पास के क्षेत्रों में आय का स्तर बढ़ा तथा स्थानीय बाजारों का विकास हुआ।

इस्पात उद्योग की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अनेक सहायक उद्योग स्थापित हुए। मशीन पार्ट्स, औद्योगिक गैस, विद्युत उपकरण, पैकेजिंग सामग्री, परिवहन सेवाएँ तथा इंजीनियरिंग इकाइयाँ विकसित हुईं। इससे औद्योगिक विविधीकरण को बढ़ावा मिला और राज्य की आर्थिक गतिविधियाँ अधिक व्यापक हुईं।

औद्योगिकीकरण को बढ़ावा-

बोकारो इस्पात संयंत्र ने पूरे झारखंड में औद्योगिक वातावरण विकसित किया। संयंत्र की स्थापना के बाद अनेक निजी एवं सार्वजनिक उद्योगों ने भी झारखंड में निवेश करना प्रारंभ किया। इससे औद्योगिक आधार मजबूत हुआ। बोकारो, धनबाद, राँची, रामगढ़ तथा आस-पास के क्षेत्रों में अनेक इंजीनियरिंग इकाइयाँ, मशीन निर्माण उद्योग, फैब्रिकेशन इकाइयाँ तथा सेवा क्षेत्र का विस्तार हुआ।

बोकारो नगर का आधुनिक विकास-

बोकारो इस्पात संयंत्र के साथ विकसित हुआ बोकारो नगर जो भारत के सबसे सुव्यवस्थित औद्योगिक नगरों में से एक माना जाता है। नगर नियोजन के अंतर्गत चौड़ी सड़कें,

सुव्यवस्थित सेक्टर, पार्क, खेल मैदान, सामुदायिक भवन, जलापूर्ति व्यवस्था, सीवरेज प्रणाली, विद्युत आपूर्ति, वृक्षारोपण, सार्वजनिक परिवहन, बाजार का योजनाबद्ध विकास किया गया। आज बोकारो नगर शहरी नियोजन का एक सफल उदाहरण माना जाता है।

शिक्षा के क्षेत्र में योगदान-

बोकारो इस्पात संयंत्र ने शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया। संयंत्र प्रबंधन द्वारा अनेक विद्यालयों की स्थापना की गई, जहाँ कर्मचारियों के साथ-साथ स्थानीय बच्चों को भी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध हुई। समय के साथ-साथ बहुत से विद्यालय स्थापित हुए जिनमें केंद्रीय विद्यालय, डीएवी विद्यालय, चिन्मय विद्यालय, विभिन्न निजी एवं सरकारी विद्यालय, तकनीकी प्रशिक्षण संस्थान प्रमुख हैं। औद्योगिक प्रशिक्षण केंद्र से इस क्षेत्र में साक्षरता दर बढ़ी तथा तकनीकी शिक्षा को प्रोत्साहन मिला।

सामाजिक परिवर्तन-

संयंत्र की स्थापना से पहले यह क्षेत्र मुख्यतः ग्रामीण एवं कृषि प्रधान था। औद्योगिकीकरण के बाद शिक्षा का प्रसार हुआ, महिलाओं की भागीदारी बढ़ी एवं आधुनिक जीवन शैली विकसित हुई। विभिन्न राज्यों के लोगों के आगमन से सांस्कृतिक विविधता बढ़ी एवं सामाजिक समरसता को प्रोत्साहन मिला। आज बोकारो एक बहुभाषी एवं बहुसांस्कृतिक नगर के रूप में जाना जाता है।

झारखण्ड के आधारभूत ढाँचे का विकास-

बोकारो इस्पात संयंत्र के कारण झारखण्ड के आधारभूत संरचना में व्यापक सुधार हुआ। इनमें प्रमुख हैं—

सड़कें : भारी मशीनों तथा कच्चे माल के परिवहन हेतु बेहतर सड़कों का निर्माण हुआ।

रेलवे : रेल नेटवर्क का विस्तार हुआ जिससे लौह अयस्क, कोयला तथा तैयार इस्पात का परिवहन सुगम हुआ।

बिजली : उद्योग की आवश्यकताओं के कारण विद्युत उत्पादन एवं वितरण व्यवस्था में सुधार हुआ।

जलापूर्ति : औद्योगिक एवं घरेलू उपयोग हेतु जल आपूर्ति प्रणाली विकसित की गई।

भारत की औद्योगिक आत्मनिर्भरता में योगदान-

बोकारो इस्पात संयंत्र की स्थापना का एक प्रमुख उद्देश्य भारत को इस्पात उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाना था।





आज भारत विश्व के प्रमुख इस्पात उत्पादक देशों में शामिल है। इस उपलब्धि में बोकारो जैसे सार्वजनिक क्षेत्र के संयंत्रों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

इस कारण इस्पात आयात में कमी आई, घरेलू उद्योगों को गुणवत्तापूर्ण इस्पात मिला, विदेशी मुद्रा की बचत हुई, रक्षा एवं रणनीतिक परियोजनाओं को मजबूती मिली तथा औद्योगिक विकास को निरंतर गति मिली।

रेलवे के विकास में योगदान-

भारतीय रेलवे विश्व के सबसे बड़े रेल नेटवर्कों में से एक है। रेल पटरियों, वैगनों, पुलों, कोचों तथा अन्य संरचनाओं के निर्माण में बड़ी मात्रा में इस्पात की आवश्यकता होती है। बोकारो इस्पात संयंत्र द्वारा निर्मित उच्च गुणवत्ता वाला इस्पात रेलवे परियोजनाओं में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है।

ऑटोमोबाइल उद्योग को सहयोग-

भारत का ऑटोमोबाइल उद्योग देश की अर्थव्यवस्था का एक प्रमुख क्षेत्र है। कार, ट्रक, बस, ट्रैक्टर तथा दोपहिया वाहनों के निर्माण हेतु उच्च गुणवत्ता वाले फ्लैट स्टील की आवश्यकता होती है। बोकारो इस्पात संयंत्र इस आवश्यकता की पूर्ति करने वाले प्रमुख उत्पादकों में शामिल रहा है।

रक्षा क्षेत्र में योगदान

रक्षा क्षेत्र में प्रयुक्त अनेक उपकरणों, वाहनों तथा संरचनाओं के निर्माण के लिए विशेष गुणवत्ता वाले इस्पात की आवश्यकता होती है। देश में इस्पात उत्पादन क्षमता बढ़ने से रक्षा क्षेत्र की आत्मनिर्भरता को भी बल मिला।

ऊर्जा एवं अवसंरचना परियोजनाएँ

बिजली संयंत्र, जलविद्युत परियोजनाएँ, तेल एवं गैस पाइपलाइन, पुल, फ्लाईओवर, औद्योगिक संयंत्र, हवाई अड्डे तथा बंदरगाह—इन सभी के निर्माण में इस्पात की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। बोकारो इस्पात संयंत्र ने देश की आधारभूत संरचना के विकास में आवश्यक इस्पात उपलब्ध कराकर महत्वपूर्ण योगदान दिया।

राष्ट्रीय आय में योगदान-

इस्पात उद्योग भारत के सकल घरेलू उत्पाद तथा औद्योगिक उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान देता है। बोकारो

इस्पात संयंत्र उत्पादन बढ़ाता है, कर राजस्व उत्पन्न करता है, निर्यात क्षमता को मजबूत करता है, औद्योगिक निवेश को आकर्षित करता है तथा राष्ट्रीय आय में योगदान देता है।

निष्कर्ष-

बोकारो इस्पात संयंत्र केवल एक औद्योगिक इकाई नहीं, बल्कि आधुनिक भारत के औद्योगिक विकास, आर्थिक आत्मनिर्भरता और क्षेत्रीय प्रगति का एक सशक्त प्रतीक है। स्वतंत्रता के बाद देश में भारी उद्योगों के विकास की जो परिकल्पना की गई थी, उसे साकार करने में इस संयंत्र ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

हालाँकि, वर्तमान समय में संयंत्र अनेक चुनौतियों का सामना कर रहा है। वैश्विक इस्पात बाजार में बढ़ती प्रतिस्पर्धा, सस्ते आयातित इस्पात का दबाव, उत्पादन लागत में वृद्धि, उच्च गुणवत्ता वाले कोकिंग कोयले पर आयात निर्भरता, पर्यावरणीय मानकों का पालन इसके समक्ष प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त, जलवायु परिवर्तन और हरित औद्योगिकीकरण की दिशा में बढ़ती वैश्विक अपेक्षाएँ भी इस्पात उद्योग के लिए नई जिम्मेदारियाँ लेकर आई हैं। इन चुनौतियों के समाधान हेतु निरंतर तकनीकी आधुनिकीकरण, स्वचालन, डिजिटलीकरण, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित उत्पादन प्रबंधन, ऊर्जा संरक्षण, अपशिष्ट पुनर्चक्रण, अक्षय ऊर्जा के उपयोग तथा हरित इस्पात उत्पादन को बढ़ावा देना आवश्यक है। साथ ही, अनुसंधान एवं विकास में निवेश और कौशल विकास कार्यक्रम भविष्य की सफलता के लिए महत्वपूर्ण होंगे। भारत सरकार के "आत्मनिर्भर भारत", "मेक इन इंडिया", "राष्ट्रीय इस्पात नीति" तथा अवसंरचना विकास कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन में बोकारो इस्पात संयंत्र की भूमिका आने वाले वर्षों में और अधिक महत्वपूर्ण होगी।

अंततः यह कहा जा सकता है कि यदि समयानुकूल सुधार, तकनीकी नवाचार और पर्यावरणीय उत्तरदायित्व को प्राथमिकता दी जाए, तो यह संयंत्र आने वाले दशकों में भी झारखंड और भारत की प्रगति का अग्रदूत बना रहेगा तथा विकसित भारत के निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहेगा।





गृहिणी : घर की आत्मा और परिवार की शक्ति

“गृहिणी : एक ऐसी नारी जो अकेले घर की संभालती है अनेक जिम्मेदारियाँ।”

गृहिणी शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है — “गृह” अर्थात् घर और “इणी” अर्थात् स्वामिनी। अर्थात् वह जो घर का संचालन करे, उसे सुव्यवस्थित रखे और परिवार को एक सूत्र में बाँधकर रखे। यह केवल एक शब्द नहीं, बल्कि त्याग, सेवा, ममता, अनुशासन, धैर्य और समर्पण का पर्याय है। वह परिवार की आधारशिला होती है। जिस प्रकार किसी भवन की मजबूती उसकी नींव पर निर्भर करती है, उसी प्रकार परिवार की खुशहाली और स्थिरता गृहिणी पर निर्भर करती है।

ऐतिहासिक मान्यता -

भारतीय इतिहास इस सत्य का साक्षी है कि महान व्यक्तित्वों के निर्माण में उनकी माताओं और गृहिणियों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है।

राजमाता जीजाबाई ने अपने पुत्र छत्रपति शिवाजी महाराज को बचपन से ही राष्ट्रभक्ति, न्याय, धर्म और स्वाभिमान के संस्कार दिए। उन्हीं के आदर्शों ने शिवाजी को महान योद्धा और जननायक बनाया।

माता पुतलीबाई ने महात्मा गांधी के व्यक्तित्व में सत्य, अहिंसा, संयम और सेवा के संस्कारों का बीजारोपण किया। उनके जीवन-मूल्यों का प्रभाव ही आगे चलकर गांधीजी को विश्व के महानतम नेताओं में स्थान दिलाने का आधार बना।

माता विद्यावती, शहीद-ए-आज़म भगत सिंह की माता ने अपने पुत्र के हृदय में देशप्रेम, साहस और बलिदान की भावना जागृत की। उन्होंने यह सिद्ध किया कि एक गृहिणी की शिक्षा और प्रेरणा राष्ट्र के इतिहास को नई दिशा दे सकती है।

भारतीय संस्कृति में माता कौशल्या, माता सीता, माता यशोदा और माता अनसूया जैसी आदर्श नारियाँ गृहस्थ जीवन की मर्यादा, धैर्य, ममता, त्याग और कर्तव्यनिष्ठा की प्रतीक मानी जाती हैं। इन आदर्शों ने पीढ़ी-दर-पीढ़ी भारतीय परिवार व्यवस्था को सुदृढ़ बनाया है।

सामाजिक मान्यता -

समाज में अक्सर यह कहा जाता है कि घर चलाना आसान काम है, क्योंकि इसमें बाहर जाकर नौकरी करने जैसी कठिनाइयाँ नहीं होतीं। बहुत से लोग यह मान लेते हैं कि गृहिणी का जीवन आरामदायक होता है। लेकिन, यदि किसी परिवार की गृहिणी एक दिन के लिए भी अपने काम से दूर हो जाए, तब पूरे घर की व्यवस्था बिखर जाती है। वास्तव में गृहिणी केवल घर संभालने वाली महिला नहीं होती, बल्कि वह पूरे परिवार की आधारशिला होती है। वह एक साथ कई भूमिकाएँ निभाती है — माँ, पत्नी, रसोइया, शिक्षक, सलाहकार, परिचारिका और परिवार की प्रबंधक। उसका जीवन त्याग, परिश्रम, प्रेम और जिम्मेदारियों से भरा होता है। भारतीय समाज में नारी को “गृहलक्ष्मी” कहा जाता है। यह शब्द केवल सम्मान का प्रतीक नहीं बल्कि उसकी भूमिका का वास्तविक चित्रण है। गृहिणी वह होती है जो घर के हर छोटे-बड़े कार्य को संभालती है, परिवार के सदस्यों की आवश्यकताओं का ध्यान रखती है और अपने त्याग व समर्पण से घर को स्वर्ग समान बना देती है। समाज में अक्सर गृहिणी के काम को महत्व नहीं दिया जाता। बहुत से लोग कहते हैं कि “वह तो सिर्फ घर पर रहती है।” यह सोच पूरी तरह गलत है। यदि गृहिणी के सारे कार्यों का मूल्यांकन किया जाए, तो उसका काम किसी नौकरी/सर्विस से कम नहीं है। लेकिन फर्क सिर्फ इतना है कि उसे अपने कार्यों के बदले वेतन नहीं मिलता। उसका पुरस्कार केवल परिवार की खुशी और संतोष होता है।

दैनिक जिम्मेदारियाँ -

गृहिणी का दिन सबसे पहले शुरू होता है और सबसे अंत में समाप्त होता है। जब पूरा परिवार गहरी नींद में सो रहा होता है, तब वह सुबह जल्दी उठकर दिन की तैयारी में लग जाती है। सबसे पहले वह घर की सफाई करती है, रसोई व्यवस्थित करती हैं और पूरे परिवार के लिए चाय एवं



अभिषेक कुमार नं.1
सहा. लेखापरीक्षा अधिकारी





नाश्ता बनाती है। बच्चों के स्कूल के लिए टिफिन तैयार करना, उनके कपड़े प्रेस करना, स्कूल बैग देखना और समय पर उन्हें तैयार करना भी उन्हीं की जिम्मेदारी होती है। इसके साथ-साथ पति के ऑफिस का सामान और भोजन तैयार करना भी उन्हीं के हिस्से में आता है।

इन सब कार्यों को करते समय वह स्वयं की थकान को कभी महत्व नहीं देती। कई बार वे खुद समय पर नाश्ता भी नहीं कर पाती, लेकिन परिवार के हर सदस्य का ध्यान पहले रखती है। एक गृहिणी का सबसे बड़ा त्याग यही होता है कि वे अपने आराम और इच्छाओं से पहले परिवार की जरूरतों को प्राथमिकता देती है।

जब परिवार के सभी सदस्य अपने-अपने कार्यों के लिए घर से निकल जाते हैं, तब भी गृहिणी का काम समाप्त नहीं होता। बल्कि उसका दूसरा चरण शुरू होता है। वह घर के हर कोने की सफाई करती है, कपड़े धोती है, बर्तन साफ करती है और पूरे घर को व्यवस्थित रखती है। यदि घर में बुजुर्ग हों, तो उनकी दवाइयों और भोजन का ध्यान भी वही रखती है। यदि कोई छोटा बच्चा हो, तो उसकी देखभाल में पूरा दिन निकल जाता है।

आर्थिक संतुलन बनाए रखना -

अक्सर लोग सोचते हैं कि गृहिणी केवल खर्च करती है, लेकिन वास्तव में वह घर के बजट को संतुलित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सीमित आय में पूरे परिवार की आवश्यकताओं को पूरा करना एक कठिन कार्य है, जिसे गृहिणी कुशलता से निभाती है। गृहिणी केवल घरेलू काम ही नहीं करती, बल्कि वह एक कुशल प्रबंधक भी होती है। सीमित आय में पूरे महीने का खर्च चलाना आसान काम नहीं है। राशन, बिजली, पानी, बच्चों की पढ़ाई, दवाइयाँ और अन्य आवश्यकताओं का हिसाब रखना भी गृहिणी की जिम्मेदारी होती है। वे यह सोचकर खर्च करती हैं कि कहीं भविष्य में कोई परेशानी न आ जाए। कई बार वह अपनी छोटी-छोटी इच्छाओं का त्याग करके परिवार की जरूरतों को पूरा करती हैं।

परिवार में शिक्षक एवं परिचारिका का रोल -

किसी भी बच्चे की पहली पाठशाला उसका घर होता है और उसकी पहली शिक्षिका उसकी माँ। बच्चे बोलना, चलना, व्यवहार करना, बड़ों का सम्मान करना, सत्य बोलना और

अनुशासन का पालन करना सबसे पहले अपनी माँ से सीखते हैं।

किसी विद्यालय में केवल शिक्षा मिलती है, लेकिन संस्कार घर में मिलते हैं। यदि परिवार में ईमानदारी, अनुशासन, सहयोग, प्रेम और नैतिकता दिखाई देती है, तो उसके पीछे गृहिणी का मौन परिश्रम होता है।

नेपोलियन बोनापार्ट ने कहा था—“मुझे सौ अच्छी माताएँ दे दो, मैं एक महान राष्ट्र बना दूँगा।”

यह कथन गृहिणी की भूमिका को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करता है।

एक गृहिणी का जीवन केवल शारीरिक मेहनत तक सीमित नहीं होता, बल्कि मानसिक रूप से भी वह हमेशा सक्रिय रहती है। परिवार का कोई सदस्य दुखी हो, बीमार हो या किसी परेशानी में हो, तो सबसे पहले गृहिणी ही उसकी चिंता करती है। वह परिवार के हर सदस्य की भावनाओं को समझती है और उन्हें संभालने का प्रयास करती है। यदि बच्चे पढ़ाई में कमजोर पड़ जाएँ, तो वह शिक्षक बनकर उन्हें पढ़ाती है। यदि पति किसी तनाव में हो, तो वह मित्र और सलाहकार बनकर उसका मनोबल बढ़ाती है। आज के आधुनिक समय में महिलाओं की भूमिका तेजी से बदल रही है। बहुत-सी महिलाएँ नौकरी भी करती हैं और घर भी संभालती हैं, लेकिन जो महिलाएँ केवल गृहिणी हैं, उनका योगदान भी उतना ही महत्वपूर्ण है। वास्तव में गृहिणी ही वह शक्ति है जो परिवार को एक साथ जोड़े रखती है। यदि घर में प्रेम, अनुशासन और संस्कार दिखाई देते हैं, तो उसके पीछे गृहिणी की मेहनत और शिक्षा होती है।

एक गृहिणी बच्चों के जीवन निर्माण में सबसे बड़ी भूमिका निभाती है। बच्चे सबसे पहले अपनी माँ से ही बोलना, चलना और अच्छे संस्कार सीखते हैं। माँ उन्हें ईमानदारी, अनुशासन और सम्मान का पाठ पढ़ाती है। वही बच्चों को सही और गलत का अंतर समझाती है। इसलिए कहा जाता है कि एक अच्छी माँ पूरे समाज का भविष्य बदल सकती है।

आधुनिक युग की गृहिणी -

आज की गृहिणी केवल रसोई तक सीमित नहीं है। वह घर की जिम्मेदारियों का सफलतापूर्वक निर्वहन करते हुए





डिजिटल तकनीक, ऑनलाइन बैंकिंग, बजट प्रबंधन और बच्चों की आधुनिक शिक्षा पर भी समान ध्यान देती है। अनेक गृहिणियाँ स्वरोजगार, लघु उद्योग, ऑनलाइन व्यवसाय, ट्यूशन तथा हस्तशिल्प जैसे कार्यों के माध्यम से आर्थिक रूप से भी परिवार का सहयोग कर रही हैं। परंपरागत संस्कारों और आधुनिक सोच का संतुलित समन्वय ही आज की गृहिणी की सबसे बड़ी विशेषता है। वह परिवार, समाज और राष्ट्र के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है।

चुनौतियाँ -

गृहिणी के जीवन में कठिनाइयाँ भी कम नहीं होतीं। कई बार उन्हें अपने काम के लिए सम्मान नहीं मिलता। परिवार के लोग उसके प्रयासों को सामान्य समझ लेते हैं। उनकी मेहनत को 'कर्तव्य' कहकर नजरअंदाज कर दिया जाता है। लगातार काम करने के कारण वह शारीरिक और मानसिक रूप से थक जाती है, लेकिन फिर भी अपने परिवार की खुशी के लिए मुस्कुराती रहती है। कई बार ऐसा भी होता है कि गृहिणी बीमार पड़ जाए, तब परिवार को उसकी असली अहमियत समझ आती है। जब रसोई का काम रुक जाता है, घर की सफाई नहीं होती, बच्चों की देखभाल में कठिनाई आती है, तब लोगों को एहसास होता है कि एक गृहिणी अकेले कितने काम संभालती है। उनका योगदान अदृश्य जरूर होता है, लेकिन अत्यंत महत्वपूर्ण होता है।

एक आदर्श परिवार वही होता है जहाँ गृहिणी के कार्यों का सम्मान किया जाए। घर के सभी सदस्यों को चाहिए कि वे घरेलू कार्यों में उसका सहयोग करें। बच्चों को अपने छोटे-छोटे काम स्वयं करने चाहिए और पति को भी पत्नी की जिम्मेदारियों को समझना चाहिए। जब परिवार के सदस्य

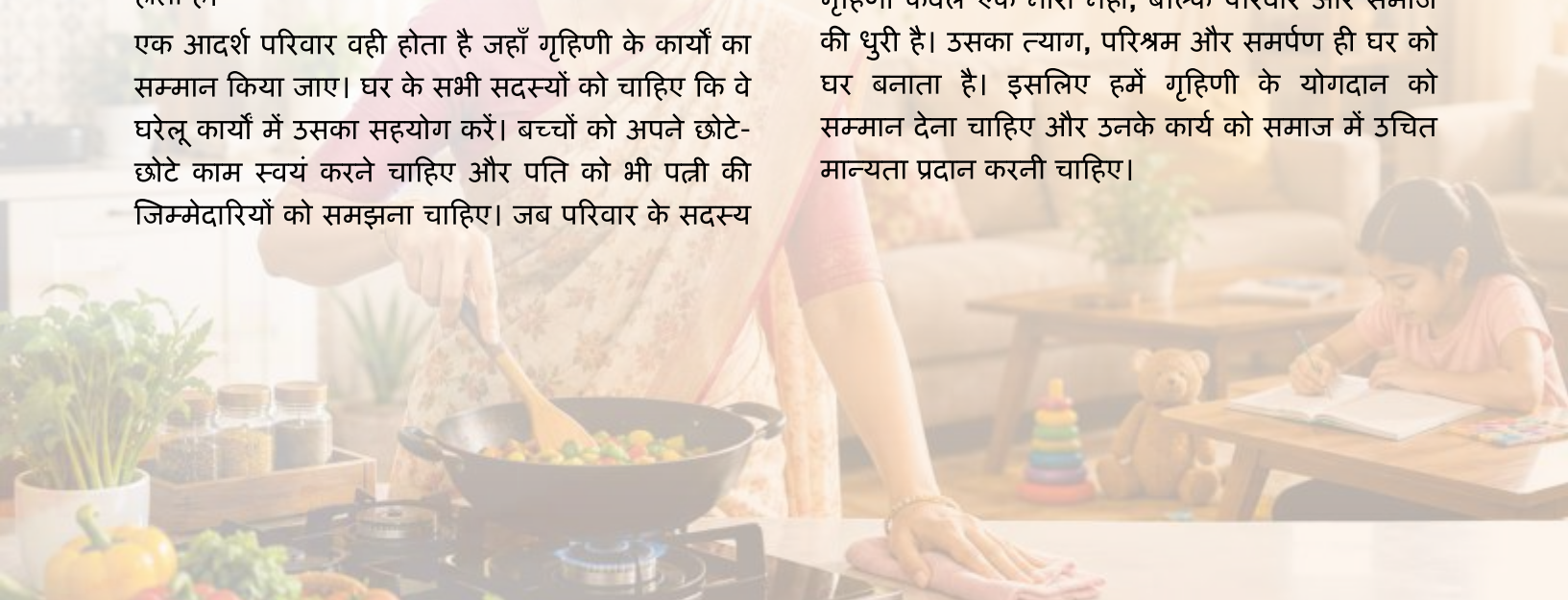
मिलकर काम करते हैं, तब घर का वातावरण सुखद और खुशहाल बनता है।

आज समाज में महिलाओं के अधिकारों और समानता की बात की जाती है। समानता का अर्थ केवल नौकरी या आर्थिक स्वतंत्रता नहीं है, बल्कि गृहिणी के कार्यों को सम्मान देना भी है। यदि एक महिला अपने परिवार के लिए घर संभाल रही है, तो यह भी उतना ही बड़ा कार्य है जितना किसी कार्यालय में नौकरी करना। हमें यह समझना चाहिए कि घर और परिवार की नींव गृहिणी के त्याग और मेहनत पर टिकी होती है।

गृहिणी का जीवन हमें निस्वार्थ सेवा, धैर्य और प्रेम की शिक्षा देता है। वह बिना किसी शिकायत के दिन-रात अपने परिवार के लिए कार्य करती है। उनकी सबसे बड़ी खुशी परिवार की मुस्कान होती है। वे अपने सपनों को पीछे छोड़कर बच्चों और परिवार के भविष्य को संवारने में लग रहती हैं।

निष्कर्ष -

अंत में यही कहा जा सकता है कि गृहिणी केवल एक महिला नहीं, बल्कि पूरे घर की आत्मा और परिवार की शक्ति होती है। उनके बिना घर केवल एक भवन बनकर रह जाता है। उनकी मेहनत, प्रेम और त्याग ही घर को स्वर्ग बनाते हैं। एक खुशहाल परिवार और सशक्त समाज के निर्माण में गृहिणी की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण होती है। गृहिणी केवल एक नारी नहीं, बल्कि परिवार और समाज की धुरी है। उसका त्याग, परिश्रम और समर्पण ही घर को घर बनाता है। इसलिए हमें गृहिणी के योगदान को सम्मान देना चाहिए और उनके कार्य को समाज में उचित मान्यता प्रदान करनी चाहिए।



हिंदी भाषा अपनी अनेक धाराओं के साथ प्रशस्त क्षेत्र में प्रखर गति से प्रकाशित हो रही है। - नलिन विलोचन शर्मा





मेरी पहली पोस्टिंग : देहरादून

एसएससी सी. जी. एल. के परिणाम के बाद मुझे लेखापरीक्षक का पद मिला तथा मेरी पोस्टिंग उत्तराखंड की राजधानी देहरादून में हुई। हालांकि, मेरी पहली प्राथमिकता रांची थी, परन्तु मेरी रैंक में मुझे मेरा गृह राज्य नहीं मिल सका। देहरादून मेरे घर से लगभग 1200 किलोमीटर दूर है। अपने घर से इतनी दूर मैं कभी नहीं रही, परिवार से दूर जा कर अकेले रहने का ख्याल मुझे डरा रहा था। मगर नौकरी तो करनी थी और वो भी ऐसी की जिसके लिए कई रात जग कर पढाई करी है मैंने। माँ ने न जाने कितने देवताओं से मन्नत मांगी है इसके लिए। तो तय हुआ मेरा देहरादून जाना। दिसम्बर का महीना था, कड़ाके की ठण्ड में मैं अपने पिताजी और माता जी के साथ अपने गृह नगर से देहरादून के लिए रवाना हुई। मेरे गृह नगर से देहरादून की कोई सीधी ट्रेन नहीं चलती है, तो हम सब पहले ट्रेन से हरिद्वार पहुँचे जहाँ से हमने देहरादून के लिए कैब लिया।

हरिद्वार से देहरादून करीब 50 किलोमीटर दूर है और रास्ता काफी मनमोहक है। बीच में राजाजी नेशनल पार्क का घना जंगल पड़ता है। चौड़ी-चौड़ी सड़क और उसके दोनों तरफ हरियाली बहुत ही प्यारा दृश्य था। थोड़ा आगे बढ़ने पर जब हम देहरादून में प्रवेश करने लगे तो रास्ते में दूर दूर ऊँचे हिमालय के पहाड़ दिखाई पड़ रहे थे। इतने



ऊँचे पहाड़ मैंने जीवन में पहली बार देखे थे। डेढ़ घंटे का सफ़र कर हमलोग देहरादून पहुँचे..। वहाँ की हवा में मुझे कुछ अलग सा महसूस हुआ। ठंडी हवा जैसे ही मैंने पहली सांस ली एक सकारात्मक एहसास हुआ, मानो देहरादून मेरा स्वागत कर रही है। देहरादून पहुँचते ही सबसे पहले मैं अपने ऑफिस की ओर निकल गयी। देहरादून का ए. जी. ऑफिस जिसे तब महालेखाकार भवन के नाम से जाना जाता था, कौलागढ़ नामक स्थान पर



संजना गुप्ता
लेखापरीक्षक

स्थित है। मैंने आज से पहले इतना सुन्दर सरकारी कार्यालय नहीं देखा था।

महालेखाकार भवन टोंस नदी के बिल्कुल किनारे स्थित है और कार्यालय के ठीक पीछे सिर्फ पहाड़ ही पहाड़ दिखाई पड़ते हैं। प्रकृति के बिल्कुल गोद में स्थित मेरा यह ऑफिस जिसे देखते ही मुझे इससे प्यार हो गया था। बिल्कुल शांत

वातावरण और सर्दी की खिली-खिली धूप बिल्कुल अलग ही एहसास दिला रही थी।

मैंने कार्यालय के एक किलोमीटर के आस-पास ही किराये का एक मकान लिया। मेरा वह किराये का घर भी हरियाली

हिंदी जाननेवाला व्यक्ति देश की किसी कोने में जाकर अपना काम चला लेता है। - देवव्रत शास्त्री





और प्रकृति से घिरा था। घर के बगीचे में मकान मालिक ने प्लम, पीच, नाशपाती, आम और जामुन के कई पेड़ लगा रखे थे और घर के बालकनी और छत से जहाँ भी नज़र जाती सिर्फ हिमालय के ऊँचे पर्वत दिखते थे।

रात का नज़ारा तो और भी अनोखा था। पूरा मसूरी घर की बालकनी से चमचमाता नज़र आता था मानो पूरी की पूरी आकाशगंगा किसी ने पहाड़ पे रख दी है। इतना सुन्दर दृश्य मैंने और मेरे माँ पिता जी ने कभी नहीं देखा था। मैं रोज़ शाम की चाय पहाड़ और उसमें डूबते सूरज को देखते हुए पीती थी। एक दिन जनवरी की सुबह जब मेरी नींद खुली और मैं बालकनी में बैठी। तभी मेरी नज़र पीछे पहाड़ पे गयी और कुछ ऐसा नज़ारा दिखा, जिसे देख कर मैं खुशी से चिल्ला उठी। पहाड़ पर बर्फ की सफ़ेद चादर बिछी थी शायद बीती रात मसूरी में बर्फ़बारी हुई थी। सफ़ेद बर्फ

वाले पहाड़ पर सूरज की किरण पड़ते ही वह सोने सा चमक उठा था। सच में, देहरादून में मैंने प्रकृति को बहुत करीब से देखा था। अपनी बालकनी से मैंने अनेक ऐसे पक्षी देखे जिनके मैं नाम भी नहीं जानती थी। हर रोज़ सुबह एक हॉर्नबिल (धनेश) पक्षी का जोड़ा भी देखा है बड़ी पीली



चोंच और लम्बे काले पंख वाले ये पक्षी हर दिन नाशपाती के पेड़ पर बैठे दिखते थे। कुछ तोते का समूह भी सुबह का नास्ता घर के पीछे वाले पीच के पेड़ पर करते थे। मेरी सुबह की शुरुआत इन्हीं पंछियों के कलरव के साथ होती थी। देहरादून में रह कर एक बात मैंने गौर की थी कि यहाँ के लोगों को जानवरों से भी काफी लगाव है। आमूमन हर घर में मैंने देखा है पालतू कुत्ते और बिल्लियाँ। इसके अलावा, गली के कुत्तों के लिए भी हर गली के कोने पर

उनके सोने के लिए कम्बल रखा देखा मैंने। दया का यह भाव और अपनी भाग दौड़ भरी जिंदगी में इन बेजुबान के लिए समय निकालना काफी सराहनीय लगा मुझे।

देहरादून जितना सुन्दर शहर था उतने ही प्यारे और मिलनसार वहाँ के लोग भी हैं। सुबह की सैर करते कोई अनजान भी आपको नमस्ते करते हुए और हालचाल पूछता हुआ मिल जायेगा। मुझे मेरे जीवन के कुछ बहुत ही प्यारे दोस्त देहरादून में मिले हैं जो कि मेरे ही कार्यालय के मेरे बैच के लेखापरीक्षक हैं। सभी खुशमिजाज़ और मिलनसार। इतने कि लगता था कितनी पुरानी दोस्ती है। लगता ही नहीं था कि कुछ महीने पहले ही सबसे मुलाकात हुई है। हम सब लंच के समय एक साथ कैंटीन में खाना खाते थे और जो लोग घर से टिफिन ले कर आते थे हम सब उनके डिब्बे सबसे पहले खाली करते थे। कार्यालय से

छुट्टी के बाद शाम की चाय भी नुक्कड़ पर सब साथ पीते थे।

देहरादून कि खास बात यह भी लगी कि शनिवार और रविवार की छुट्टी कभी भी बोरियत वाली नहीं लगी मुझे। हर वीकेंड किसी न किसी नए जगह को एक्स्प्लोर करना काफी रोमांचक लगता था। कभी किसी दिन

मसूरी, कभी कीमाड़ी, कभी सहस्रधारा या कभी ऋषिकेश हर छुट्टी में एक नया स्थान घूमने के लिए मैं उत्साहित रहती थी।

देहरादून से मसूरी मात्र 34 किलोमीटर दूर है जो कि भारत का एक प्रसिद्ध हिल स्टेशन है। इसे पहाड़ों की रानी भी कहते हैं। 6578 फीट की ऊंचाई पर स्थित मसूरी गर्मियों में भी काफी ठण्ड होती है।





मसूरी के कई प्रसिद्ध स्थान हैं जिसे मैंने अलग-अलग वीकेंड में एक्स्प्लोर किया है। मॉल रोड से लेकर कैमल बेक रोड तक। वहां की शाम, सूर्यास्त और मॉल रोड की गरमा-गरम कॉफी एक अलग ही अनुभव है यह। मॉल रोड से देहरादून भी नीचे घाटी में कम प्यारा नहीं लगता। मसूरी में मॉल रोड के अलावा और भी कई जगह मैंने एक्स्प्लोर किये हैं। जिसमें से कुछ तो मेरे पसंदीदा बन गए हैं, जैसे कि लन्दौर। लन्दौर एक छोटा सा कैंटोनमेंट टाउन है जहाँ आज भी एंग्लो भारतीय लोग रहते हैं। कहते हैं लन्दौर घूमने का असली मजा मानसून में है। तो मैं भी निकल पड़ी जुलाई के एक वीकेंड में अपनी स्कूटी से लन्दौर घूमने। मसूरी से भी आगे है लन्दौर, करीब आधा घंटा लगा हमें वहां पहुंचने में। वहां पहुंचते ही मैंने देखा लाल टिब्बा और चार दुकान। कहते हैं लन्दौर में मात्र 40 मकान और चार दुकान हैं। लन्दौर की खूबसूरती किसी जादू से कम नहीं लगती। ऐसा लग रहा था मानो समय धीरे-धीरे बढ़ रहा है। लाल टिब्बा से हिमालय की ऊँची चोटी दिखती है बर्फ से ढकी हुई। यहाँ प्रकृति बिल्कुल अपने वास्तविक रूप में दिखती है बिल्कुल अनछुई। वहां बारिश भी अनोखे ढंग से होती है। ऐसा लगता है जैसे पानी नहीं मिस्ट है। मुझे लन्दौर की सड़क पर चल कर ऐसा लग रहा था जैसे मानो मैं बादलों में चल रही हूँ जैसे कि मैं किसी सपने में हूँ। चारों ओर कोहरा था और बारिश की बूंदें हवा में यूँ घुली हुई थी जिसकी खुशबू मेरे हर श्वास में अनुभव हो रही थी। रास्ता बहुत ही शांत और साफ सुथरा था। सड़क के दोनों ओर डेज़ी और हाइड्रेंजिया के रंग बिरंगे फूल देखने को मिल रहे थे, अलग ही दुनिया सा लग रहा था। लन्दौर में ही भारत के प्रसिद्ध लेखक रस्किन बांड का घर भी है। वहां का संत पॉल चर्च ब्रिटिश कोलोनियल एरा की याद दिलाता है। लन्दौर का ही एक प्रसिद्ध लन्दौर बेक हाउस है जहाँ की स्वादिष्ट इंग्लिश पेस्ट्रीज और केक काफी स्वादिष्ट होती है। वहां बैठ कर भी मैंने कॉफी और एप्पल पाई का लुप्त उठाया है। लन्दौर का घंटा घर और सिस्टर बाज़ार काफी लोकप्रिय है। लन्दौर सच में मसूरी में मेरी सबसे पसंदीदा जगह है। वहां जा कर मुझे ऐसा लगा जैसे समय सच में रुक गया है।

इसके अलावा, मसूरी में ही अनेक जगह हैं जहाँ की

सुन्दरता अलौकिक है जैसे कि क्लाउड एंड और भदराज मंदिर। क्लाउड एंड से मैंने अब तक का सबसे खूबसूरत सूर्यास्त देखा है और भदराज मंदिर श्री कृष्णा के बड़े भाई श्री बलराम का मंदिर है। माना जाता है कि महाभारत के युद्ध के दौरान श्री बलराम ने यहाँ कड़ी तपस्या की थी। उनकी स्वयंभू प्रतिमा आज भी वहां मौजूद है। भदराज मंदिर 7500 फीट की ऊंचाई पर स्थित है यहाँ तक पहुंचने के लिए करीब 1 किलोमीटर की चढ़ाई करनी पड़ती है। मैं यहाँ अप्रैल के महीने में गयी थी जब पूरे उत्तर भारत में गर्मी थी यहाँ दोपहर में ही सर्द हवा बह रही थी। यहाँ तक पहुंचने का रास्ता भी खूबसूरत था। चारों तरफ बुरांश के फूल के पेड़ अपनी सुन्दरता बिखेर रहे थे। रास्ते में मुझे बुग्याल दिखे जो कि हिमालयी क्षेत्र के घास के मैदान होते हैं, जो दूर दूर तक अपनी हरियाली फैला रहे थे। बुग्याल के पहाड़ एकदम हरे मखमली दिख रहे थे जैसे पहाड़ ने हरे रंग का कोमल कम्बल ओढ़ रखा हो। भदराज मंदिर में दर्शन कर के मन को अलग शांति महसूस हुई। इतनी ऊंचाई से जो घाटी और नदियाँ दिखती हैं ऐसा लगता है जैसे किसी ने चित्रकला की है। पहाड़, सूरज, नदी और झरने किसी पेंटिंग जैसे दिखते हैं। तब एहसास होता है उस ईश्वर का जो कि सबसे बड़ा कलाकार है, जिसने इस प्रकृति को इतनी सुन्दरता से उकेरा है। लगता है वो मौजूद है इन्हीं पहाड़ की सर्द हवाओं में, इन्हीं पेड़ के फूलों की भीनी खुशबू में, इन्हीं बुग्याल की नरमी में और सर्दी वाले धूप की गर्मी में।

देहरादून आ कर मैंने ना सिर्फ प्रकृति को करीब से देखा, बल्कि खुद को भी जाना। अपने आप को खुशकिस्मत समझा की इस धरती पर हमें जीने के लिए जो कुछ भी चाहिए, वो सब कुछ प्रकृति में पहले से ही मौजूद है। फिर भी, हम सब भागते रहते हैं कुछ न कुछ पाने के लिए। देहरादून जा कर मुझे समझ आया ठहराव कितना जरूरी है जीवन में और प्रकृति से प्रेम और इसके प्रति सम्मान ही हमारा असली विकास है। एक साल आठ महीने देहरादून में रहने के बाद मेरा स्थानांतरण झारखण्ड मेरे गृह राज्य में हो गया। मैं देहरादून से वापस आ गयी पर देहरादून आज भी मेरे दिल के एक हिस्से में मौजूद है।





समय की नदी

गाँव के आखिरी छोर पर बहती थी एक शांत नदी—नीली नहीं, बल्कि हल्की मटमैली, जैसे समय ने उसमें अपने सारे रंग घोल दिए हों। लोग उसे बस नदी कहते थे, लेकिन बुजुर्गों के लिए वह “समय की नदी” थी। कहते थे, जो इसमें देर तक झाँक ले, उसे अपना बीता हुआ और आने वाला समय—दोनों दिखने लगते हैं। आरव बचपन से यह सब सुनता आया था और हमेशा हँस देता था। उसे इन बातों में कोई सच्चाई नहीं लगती थी। उसके लिए नदी सिर्फ एक जगह थी—जहाँ वह स्कूल से लौटते हुए पत्थर फेंकता, कभी-कभी तैरता और अक्सर अकेला बैठकर सोचता।

आरव बीस साल का था, पर उसकी आँखों में उम्र से ज्यादा थकान थी। पिता की मृत्यु को पाँच साल हो चुके थे, माँ सिलाई करके घर चलाती थीं और वह खुद शहर जाने की तैयारी कर रहा था। गाँव उसे छोटा लगने लगा था—सीमित, बँधा हुआ, जैसे साँस लेने की जगह ही न हो।

उस दिन नदी कुछ अलग लग रही थी। शाम का समय था। सूरज डूब रहा था और पानी पर सुनहरी रेखाएँ खिंच गई थीं। आरव नदी के किनारे बैठा था, हाथ में शहर के कॉलेज का एडमिशन फॉर्म। कागज के कोने मुड़े हुए थे, जैसे वह भी असमंजस में हो।

“क्या सच में जाना चाहिए?” उसने खुद से पूछा। उसी पल किसी ने पीछे से कहा,

“हर नदी को छोड़कर जाना आसान नहीं होता।” आरव चौंक गया। पीछे मुड़ा तो देखा—एक बूढ़ा आदमी, सफ़ेद दाढ़ी, साधारण कपड़े, हाथ में लकड़ी की छड़ी। आँखें गहरी थीं, जैसे बहुत कुछ देख चुकी हों। “आप कौन हैं?” आरव ने पूछा। बूढ़ा मुस्कुराया। “जो हर किसी से यही सवाल सुनता है।” बूढ़ा नदी के पास आकर बैठ गया। दोनों कुछ देर चुप रहे। सिर्फ पानी की आवाज़ थी।

“तुम शहर जाना चाहते हो,” बूढ़े ने कहा।

“हाँ,” आरव ने बिना छिपाए जवाब दिया।

“क्यों?” आरव ने लंबी साँस ली।

“क्योंकि यहाँ कुछ नहीं है। हर दिन वही रास्ते, वही लोग,

वही सपने—या कहूँ, सपनों की कमी।”

बूढ़ा हँसा, पर मज़ाक में नहीं।

“सपने जगह से नहीं, आँखों से छोटे होते हैं।”

आरव को गुस्सा आया।

“आपको क्या पता?”

बूढ़े ने नदी की ओर देखा।

“अगर यह नदी बोल पाती, तो तुम्हारे पिता की आवाज़ में बोलती।”

आरव सन्न रह गया।

“आप मेरे पिता को जानते थे?” उसकी आवाज़ काँप गई।

बूढ़ा बोला,

“मैंने उन्हें यहाँ रोते देखा था। उसी पत्थर पर, जहाँ तुम बैठे हो।”

आरव को विश्वास नहीं हुआ। उसके पिता तो मज़बूत थे, कभी रोते नहीं थे—कम से कम उसने तो नहीं देखा था।

“कब?” उसने पूछा।

“उस दिन, जब उन्होंने शहर छोड़कर गाँव लौटने का फैसला किया था।”

आरव के हाथ से फॉर्म फिसल गया।

“उन्होंने कभी बताया नहीं...” वह बुदबुदाया।

बूढ़ा खड़ा हुआ।

“नदी सब याद रखती है। चाहो तो दिखा भी सकती है।”

आरव हँसना चाहता था, पर हँसी निकली नहीं।

“कैसे?” बूढ़े ने कहा,

“बस पानी में देखो—और भागो मत।”

आरव ने झिझकते हुए नदी में झाँका। पहले तो उसे बस अपनी परछाईं दिखी। फिर लहरें थम गईं। पानी किसी शीशे की तरह साफ़ हो गया।

और फिर—उसने अपने पिता को देखा।



रुचि साराह मिश्र

सहा. लेखापरीक्षा अधिकारी





युवा, लगभग उसी उम्र के जैसे वह खुद था। पिता एक बैग लिए खड़े थे, आँखों में डर और उम्मीद—दोनों।

आरव की साँस रुक गई।

दृश्य बदलने लगे।

पिता शहर में संघर्ष कर रहे थे। छोटी नौकरी, अपमान, अकेलापन। फिर माँ से मुलाकात, शादी, कुछ खुशियाँ—और फिर निर्णय।

“मैं वापस जाऊँगा,” पिता कहते दिखे।

“जहाँ मेरा मन साँस ले सके।”

आरव की आँखें भर आईं।

उसे पहली बार समझ आया कि उसके पिता गाँव में हारकर नहीं, बल्कि खुद को बचाने के लिए लौटे थे।

“हर पीढ़ी वही गलती दोहराती है,” बूढ़े की आवाज़ गूँजी।

“भागने को आज़ादी समझती है।”

आरव ने नज़र हटाई।

“तो क्या मैं न जाऊँ?” बूढ़ा मुस्कराया।

“मैंने यह नहीं कहा।” “फिर क्या?”

“जाना और भागना—दो अलग बातें हैं।”

रात गहराने लगी थी। चाँद निकल आया।

“नदी क्या मुझे मेरा भविष्य भी दिखा सकती है?” आरव ने पूछा।

“अगर देखने की हिम्मत हो,” बूढ़ा बोला।

आरव ने फिर पानी में देखा।

इस बार उसने खुद को शहर में देखा—कामयाब, थका हुआ,

अकेला।

फिर एक और दृश्य—वह गाँव में स्कूल खोलता हुआ, बच्चों को पढ़ाता हुआ, माँ के चेहरे पर संतोष।

दोनों सच लग रहे थे। दोनों अधूरे भी।

“कौन सा सही है?” आरव ने पूछा।

बूढ़े ने जवाब नहीं दिया।

अचानक लहरें तेज़ हो गईं। दृश्य टूट गए। आरव पीछे गिर पड़ा।

जब उसने संभलकर देखा—बूढ़ा गायब था।

सिर्फ नदी थी। शांत। रहस्यमयी।

आरव देर तक बैठा रहा।

अगले दिन उसने फ़ॉर्म मोड़कर संदूक में रख दिया। वह शहर गया—लेकिन भागने नहीं, सीखने। उसने तय किया कि वह लौटेगा। सिर्फ अपने लिए नहीं, बल्कि गाँव के लिए।

सालों बाद जब वह वापस आया, तो नदी वैसी ही थी। उस दिन उसे फिर वही बूढ़ा दिखा।

इस बार बूढ़ा बोला,

“अब तुम समझ गए हो।”

आरव मुस्कराया।

“हाँ। समय कहीं बहता नहीं—हम बहते हैं।”

नदी चुप रही।

लेकिन उसकी लहरों में संतोष था।



हिंदी भारतीय संस्कृति की आत्मा है। - कमलापति त्रिपाठी



आईनों के शहर में...



शेखर कुमार राय
लेखापरीक्षक

आईनों के शहर में

इस तरह खो गए हम
आसमां की ख्वाहिश थी
जमीं हो गए हम।

करबला के काफिलों में

हर रोज चला करते थे,
वो लोग और थे जो
मेरी तरक्की पर जला करते थे।

हमेशा मुस्कुराने की आदत थी

जरा सी चोट पर रो गए हम
आसमां की ख्वाहिश थी
जमीं हो गए हम।

समंदर से सपनों को
साहिल पर लाना था,
हम क्या चीज़ थे,
दुनिया को बतलाना था।

लम्बे सफर पर निकले थे,
जरा-सी नींद पर सो गए हम
आसमां की ख्वाहिश थी
जमीं हो गए हम।

शहर में कुछ ऐसे बिके कि
खुद का मोल भूल गए हम,
आईनों का दोष कैसा
जब चेहरा भूल गए हम।

इक प्रश्न मेरे वजूद से
क्या थे? क्या हो गए हम
आसमां की ख्वाहिश थी
जमीं हो गए हम।



नाम की खोज

मेरा नाम मुकेश कुमार है। मैं एजी ऑफिस राँची में वरिष्ठ लेखा परीक्षक हूँ, यही मेरा नाम और यही मेरी पहचान है। मेरा यह नाम और पहचान मेरे इस देह की है, जिसमें मैं बैठा हुआ हूँ। यह नाम मेरे जन्म के बाद इस संसार में आने से माता-पिता द्वारा मिली है। मेरी पहचान इस संसार में इस देह द्वारा किये गए कर्मों के कारण मिली है।

न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः ।

न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम् ॥

श्रीकृष्ण कहते हैं—“ऐसा कभी नहीं था जब मैं, तुम या ये सभी राजा अस्तित्व में न रहे हों। और ऐसा भी नहीं है कि भविष्य में हम कभी अस्तित्वहीन हो जाएंगे; हम सब अनादि काल से हैं और अनंत काल तक रहेंगे।

**वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति
नरोऽपराणि।**

**तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि
देही॥२२**

जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर नए वस्त्र धारण करता है, वैसे ही जीवात्मा पुराने और व्यर्थ हो चुके शरीरों को त्यागकर नए भौतिक शरीर को प्राप्त करती है।

स्पष्ट है कि मेरे देह के अन्दर वह जो भी है, उसे जीवात्मा कहते हैं। तो क्या मेरा वास्तविक नाम जीवात्मा है। मैंने इस सम्बन्ध में एक अध्यात्मिक व्यक्ति से चर्चा की। उन्होंने मुझे कहा कि तुम एक आत्मा हो और तुम्हारे वास्तविक नाम की पहचान तभी होगी जब तुम आत्मसाक्षात्कार कर लोगे।

मैंने उनसे पूछा : ये आत्मसाक्षात्कार कैसे होगा, ताकि मैं अपने वास्तविक नाम को खोजू।

उन्होंने मुझे सलाह दी कि मैं प्रभु की आराधना करू।

मैंने फिर पूछा : किस प्रभु की। प्रभु के तो अनेकों नाम हैं :- कृष्ण, राधा, शिव, ब्रह्म, रब, खुदा, करीम, अल्लाह, वाहेगुरु, राम, रहीम, विष्णु, गोविन्द, ईसा मसीह आदि।

उनका उत्तर था कि सभी ईश्वर एक हैं, इनमें से किन्हीं का भी नाम जपो काम बन जायेगा।

नाम जप सुनते ही मेरा ध्यान स्वतः ही प्रेमानंद महाराज

की बातों में खोता चला गया। हाल ही में राँची के सुकुरहुट्ट में प्रदीप मिश्रा का शिवमहापुराण विषय पर कथावाचन चल रहा था। अपार भीड़ थी, लोगों के चेहरों पर खुशी और अपार शांति नजर आ रही थी। लोग प्रदीप मिश्रा के चरण रज (वहा की मिट्टी) अपने घर ले जा रहे थे। मैं समझ गया कि यह सब प्रदीप मिश्रा का नहीं, उनके द्वारा उस पावन धरती पर उच्चारित शिव के नाम का प्रताप है। अब तो प्रभु के नाम की महिमा का पक्का विश्वास हो गया। उस दिन की कथा में नाम जाप की चर्चा हो रही थी। भगवान श्री विष्णु शिव जी से पूछ रहे थे कि आप किसका नाम जाप करते हैं और किनका ध्यान करते हैं।

शिव जी का जबाब था:- मैं राम नाम का जाप करता हूँ और ओम का ध्यान करता हूँ।

मैं कथा के इस प्रसंग को सुनकर भावविभोर हो गया। शिव जी के वचन सुनकर मैं प्रभु के अनेक नामों में राम नाम को सर्वश्रेष्ठ समझने लगा।

बच्चों के गर्मी की छुट्टियों में मैं सपरिवार घर गया। अगले दिन ही मुझे वापस लौट जाना था, मैं अपने निर्धारित आवंटित सीट पर बैठकर ट्रेन से राँची आ रहा था। मेरे सीट के सामने बैठे महानुभाव ने मुझसे पूछा:- क्या आप अपना नाम बतायेगे। मैंने उत्तर दिया :- मुकेश कुमार।

उन्होंने फिर पूछा:- मेरा मतलब है, पूरा नाम।

मैं तुरंत समझ गया कि वे मेरी जाति जानना चाहते हैं। अचानक मुझे क्या सुझा कि मैं कहने लगा:- मेरा वास्तविक नाम मालूम नहीं हैं, मैं इसकी खोज कर रहा हूँ। एक महात्मा ने मुझे बताया है कि मुझे मेरे वास्तविक नाम की पहचान तभी होगी, जब मैं आत्मसाक्षात्कार कर लूँ। ये तभी संभव है जब मैं राम नाम का जाप अनवरत करता रहूँ।

यह उत्तर सुनकर वे महानुभाव हँसने लगे और फिर चुप हो गए।



मुकेश कुमार नं.1
वरिष्ठ लेखापरीक्षक





उस महानुभाव के बगल में ही एक सज्जन बैठे हुए थे, उन्होंने मुझसे पूछा, आप कहा जा रहें हैं।

मैंने कहा :- राँची

उन्होंने मुझसे कहा कि मैं राँची में ही रहता हूँ। आपके पास यदि समय हो तो आप मुझे बुलाएं, मैं आपसे मिलने का इच्छुक हूँ। मैंने हामी भर दी। उन्होंने मुझे अपना नंबर दिया।

रविवार का दिन था। कार्यालय द्वारा आवंटित हिन् स्थित क्वार्टर में मैं अकेला बैठकर ट्रेन वाले उस सज्जन के बारे में सोच रहा था। मैंने उन्हें डोरंडा स्थित श्रीकृष्ण पार्क में बुलाने की सोची।

उनके नंबर पर कॉल किया और उन्हें शाम के पांच बजे का समय दिया। वे सज्जन समय के पक्के व्यक्ति थे। 5 बजे हम दोनों पार्क में आमने-सामने बैठे थे।

सर्वप्रथम मैंने ही उनसे प्रश्न किया :- “आप मुझसे क्या बात करना चाहते हैं?”

कुछ पल के लिए वह चुप रहे। फिर उन्होंने मुझसे सीधे-सीधे प्रश्न किया :- “आप आत्मसाक्षात्कार के लिए राम नाम को ही श्रेष्ठ क्यों मानते हैं?”

मैंने तुरंत उत्तर दिया :- मैंने सत्संग में सुना है कि वो जो परमात्मा सृष्टि के कण-कण में समाये हैं, जो अजर, अमर, अगम, अगोचर और अविनाशी हैं, वही राम हैं। क्योंकि वो परमात्मा सृष्टि के कण-कण में रमे हैं, इसलिए उन्हें राम कहते हैं।

मैंने फिर कहा :- राम नाम प्रभु का वो सच्चा नाम है, जिनका जाप स्वयं श्री शम्भू शिव जी करते हैं। कहा भी गया है “आत्म में राम, राम में आत्म” अर्थात् आत्मा में राम है और राम में आत्मा है।

उस सज्जन ने पूछा:- “क्या आप ब्रह्म मुहूर्त में उठते हैं?”

“हाँ” मेरा उत्तर था।

उन्होंने फिर पूछा :- क्या आपने कभी उस समय अजान सुना है?

यह सुनते ही मेरी आंखें सोच की मुद्रा में आश्चर्य से सिकुड़ती चली गयी, पल भर के लिए मैं विस्मित हुआ, मेरी नजरे उस सामने बैठे सज्जन पर स्थिर होता चला गया। मैं वहीं खो सा गया। मन में उठे विचारों के बवंडर स्मृति के उस स्थान पर जाकर केंद्रित हो गयी, जब मैं दो वर्ष पूर्व ही श्री कुमार आलोक और श्री अनिल कुमार दास के साथ ऑडिट पर धनबाद गया था। उस दिन मेरी पूरी टीम

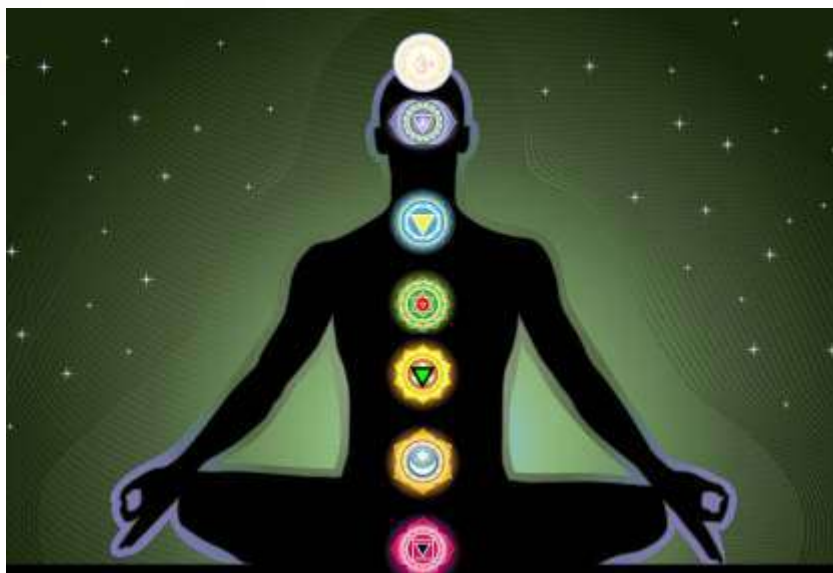
धनबाद के एक होटल में ठहरी हुई थी। ऑडिट के कुछ कार्यों से निवृत्त होकर हमलोग रात्रि के करीब 11 बजे सोये थे। मेरी आदत सुबह 3 बजे के बाद उठ जाने की है। आदतानुसार मेरी नींद सुबह के करीब 3 और 4 बजे के बीच टूटी। मैं उठकर बैठ गया और प्रभु का ध्यान करने लगा। कुछ ही देर के उपरांत मुझे सुबह के

अजान के बोल सुनाई दिए। उस आवाज में इतनी मिठास थी मानो वो आवाज गगन मंडल से उतरकर पूरे कायनात को आनंद के सागर में डुबो दिए हो। मुझे लगा मैं उस आवाज को सुनता रहूँ और उसके नशे में सराबोर रहूँ। “अल्लाहु अकबर, अशहदु अन ला इलाहा इल्लल्लाह”।

अचानक मेरी तंद्रा भंग हुई। उस सज्जन का प्रश्न जारी था। उन्हें देखकर ऐसा लगा मानों वे मेरे मन में चल रहे बातों को जानते हों।

उन्होंने कहा :- अजान में बोली गयी अल्लाहु अकबर का मतलब है कि अल्लाह सबसे बड़ा है और अशहदु अन ला इलाहा इल्लल्लाह का अर्थ है कि मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई ईबादत के काबिल नहीं है।

उन्होंने फिर समझाया :- आत्माये यानि हम इंसानों के





देह में आने से पहले शुरुआत में जब परमात्मा से अलग हुई तो परमात्मा ने आत्मायो से पूछा :- 'अलस्तु बिरबिक्किम' यानि क्या मैं तुम्हारा परमात्मा नहीं हूँ।

आत्माये यानि हम इंसान (देह में आने से पहले) ने उत्तर दिया :- 'कालू बला शहिदाना' यानि बेशक तू हमारा परमात्मा है और हमलोग तुम्हारे 'जुज' यानि अंश हैं। परमात्मा ने खुश होकर हम मनुष्यों को सारे कायनात का शहंशाह बना दिया और फरिस्तों को हुक्म दिया कि आप सभी इनकी सेवा में लगे रहें। इस हुक्म के बाद से ही हम सब की सारी इच्छायें परमात्मा द्वारा युगों-युगों से पूरी होती आ रही हैं। परमात्मा ने हमलोगों को यहाँ तक स्वतंत्र छोड़ रखा है कि जब तक इच्छाएँ शेष रहे तब तक हमसब कायनात का सुख भोगते रहे।

उस सज्जन की बातों को सुनकर मुझे यह प्रश्न अजीब दुविधा में डाल रही थी कि "क्या राम की ईबादत और अल्लाह के नाम का जाप एक ही बात है?" खैर मैं गुरुनानक द्वारा लिखी गई पुस्तक "जपु जी" का अध्ययन किया। पूरे किताब में गुरु की महिमा और नाम जपने की चर्चा है। मैंने संक्षिप्त बाईबल पढ़ने का प्रयास किया। उससे यह पता चला कि नाम की प्राप्ति का आधार परमात्मा से प्रेम है।

बाईबिल में एक जगह मुझे यह बातें लिखी हुई मिली:

"आदि में यह नाम (शब्द) था और नाम (शब्द) ईश्वर के साथ था और नाम (शब्द) ही ईश्वर था।

अब तो मुझे पक्का विश्वास हो गया कि ब्रह्माण्ड में परमात्मा का कोई सच्चा नाम है, जिसके अनवरत जाप से आत्म साक्षात्कार होता है।

अब मन में प्रश्न उठने लगा, तो क्या धरती पर

परमात्मा के अनगिनत नाम हैं? क्या वे सच्चे नहीं हैं? ये मैं क्या सोंच रहा हूँ, परमात्मा के अनगिनत नाम जो सर्वसुलभ और मौजूद हैं, वे झूठे नहीं हो सकते हैं। तो क्या वही बात सच है कि ईश्वर एक हैं वे प्रकृति के घट-घट में हैं और पत्ते-पत्ते में मौजूद हैं, उनका जाप किसी भी नाम से किया जाये, अभीष्ट फल की प्राप्ति जरूर होगी।

परमात्मा के नाम के सम्बन्ध में गीता के अनुसार :-

ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः।

ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा।।।।

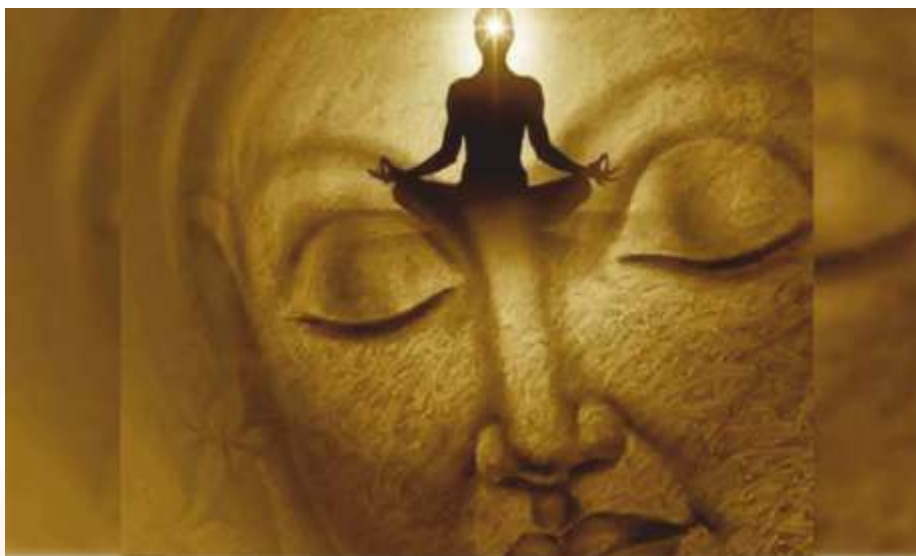
सृष्टि के आरम्भ से ही सच्चिदानंद ब्रह्म (परमेश्वर) को प्राप्त करने के लिए" ॐ तत् सत्" इन तीन नामों का निर्देश (स्मरण) कहा गया है। इन्हीं से वेदों, ब्राह्मणों और यज्ञों की रचना हुई।

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।

उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः॥

उस ज्ञान को समझने के लिए, जो तुम्हें सत्य तक पहुँचा सके, किसी तत्त्वदर्शी (आध्यात्मिक) गुरु की शरण में जाओ। उनके पास विनीत होकर (दंडवत प्रणाम कर) सत्य को जानने की जिज्ञासा प्रकट करो और निस्वार्थ भाव से उनकी सेवा करो। वे तत्त्वज्ञानी महात्मा जिन्होंने सत्य का साक्षात्कार कर लिया है, तुम्हें उस दिव्य ज्ञान का उपदेश देंगे।

अतः भगवतगीता यह साफ-साफ निर्देशित कर रहा था कि



सृष्टि के आदिकाल से ही परमात्मा के सच्चे नाम मौजूद हैं और जिनका ज्ञान तत्त्वदर्शी संतो को है।

अब प्रश्न था कि प्रभु के वास्तविक नाम की खोज के लिए कैसे तत्त्वदर्शी संत को





कहाँ ढूँढा जाये।

उस रात्रि के स्वप्न में मैंने देखा :- चाँदनी रात थी। चंद्रमा का प्रकाश पूरे धरती को अपनी रोशनी में डुबोई हुई थी। मैं अकेला उस रोशनी में आगे बढ़ रहा था। चारों तरफ पेड़-पौधे नजर आ रहे थे। रास्ता चौड़ा था, जिसपर मैं चल रहा था। आगे रास्ता संकरा होता गया। उस चांदनी रात में कोई चकोर चंद्रमा को एकटक निहार रहा था। चांदनी रात के उस खूबसूरत और रोमांटिक पल मुझे आनंदित कर रहे थे। कुछ दूर और सफर करने के उपरांत ही मुझे एक प्रसन्नचित व्यक्ति दिख गए। मेरे चाहने के बावजूद भी उस व्यक्ति का चेहरा साफ नहीं दिख रहा था। उन्होंने मुझे पास के ही एक झोपड़ीनुमा जैसे दिखने वाले कमरे में चलने का इशारा किया। कमरे के अन्दर बैठने का चबूतरा बना हुआ था। खिड़की खुली थी, जिससे होकर चंद्रमा की खूबसूरत छटा अन्दर झाँक रही थी।

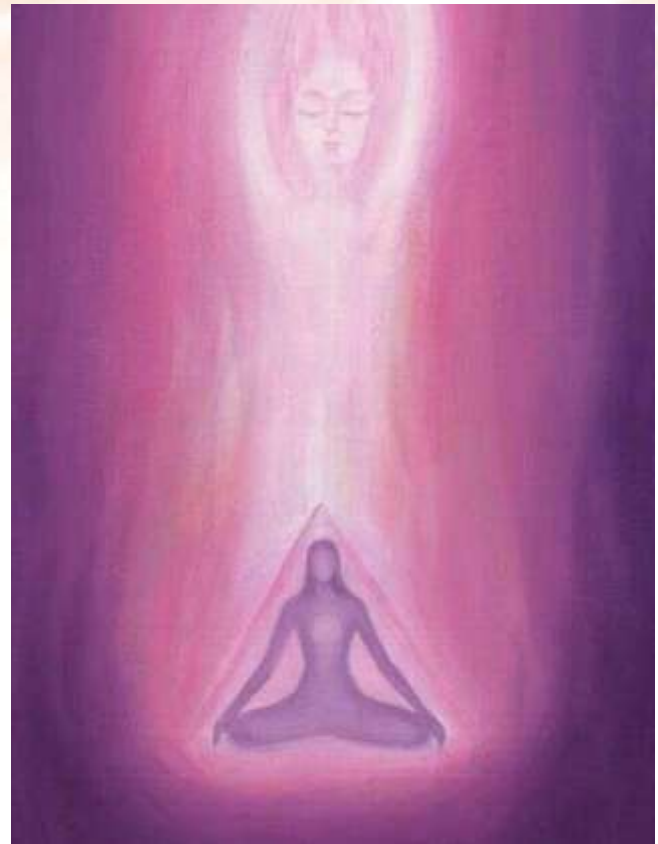
हम दोनों आमने सामने बैठे थे,

मैंने पूछा:- “आप कौन हैं और मुझसे क्या बातें करना चाहते हैं?”

उन्होंने शालीनता से उत्तर दिया :- मैं सूक्ष्मलोक का वासी हूँ। मुझे आपसे आपके स्वप्न में भी मिलने की इजाजत नहीं है, लेकिन मुझे आपसे मिलना जरूरी था। इसलिए, मैं यहाँ स्वप्नदेवी से विशेष इजाजत लेकर आया हूँ।

उन्होंने फिर कहा :- मुझमें और आप में केवल शरीर के एक घट का अंतर है। आपकी आत्मा को एक के बाद एक कुल तीन शरीरों से आबद्ध किया गया है- कारण शरीर, सूक्ष्म शरीर और स्थूल शरीर। मेरी आत्मा दो शरीरों से आबद्ध है- कारण शरीर और सूक्ष्म शरीर। ये स्थूल शरीर जिसे आप अभी देख पा रहे हैं, इसे मैंने अपनी इच्छा शक्ति से निर्मित किया है। कुछ देर के लिए निर्मित ये शरीर आपसे बातों के उपरांत परमाणुओं में विघटित हो जायेगे।

पूर्व में मैं भी आपके जैसा मनुष्य था, लेकिन मृत्यु के पूर्व स्थूल लोक (मृत्युलोक) में मेरी कोई भी इच्छा शेष नहीं रह गयी थी। अतः मेरी आत्मा के उस स्थूल शरीर का पूरी तरह नाश हो गया है।



सूक्ष्मलोक वासी मृत्युलोक वासी से ज्यादा सुखी हैं, लेकिन हम वासी भी परमात्मा के उस सच्चे अविनाशी नाम की तालाश में हैं, ताकि आत्मा पर पड़े इस शरीर रूपी बंधन से सदा-सदा के लिए छुटकारा मिल जाये।

बिना रुके वे कहते जा रहे थे- आपको एक रहस्य बता दूँ। सूक्ष्म लोक के सर्वेसर्वा ब्रह्मा, विष्णु और स्वयं देवों के देव महादेव भी उस एक सच्चे नाम की खोज में हैं। मैंने एक खास बात सुनी है। एक बार महादेव को पता चला कि परमात्मा शून्यवासी हैं और उनका वो अविनाशी नाम भी शून्य में मौजूद है। उन्होंने अपना तीसरा नेत्र अंदर की ओर खोलते हुए शून्य में लगातार ध्यान लगाया और वहाँ उन्होंने राम नाम पाया। तब से ये माना जाने लगा कि राम नाम ही सतनाम है। लेकिन, बाद में पता चला कि वो सर्व व्यापी परमात्मा उस शून्य के परे रहता है। वह निराकार, अगम, अगोचर और सृष्टि के कण-कण में निवास करनेवाला परमात्मा अद्वितीय, अनुपम और अलेख है।





उधार : मदद, भरोसा या त्याग? (आपबीती पर आधारित)

जनवरी 2021 की ठंडी सुबह थी। हल्की धुंध और ठंडी हवा ने शहर को ढक रखा था। कुणाल अपने बचपन के दोस्त अरविंद को तीस हजार रुपये का पहला उधार दिया था। उसके भीतर डर और उम्मीद दोनों मौजूद थे। छः महीने में लौट जाएगा, यही सोचा था। लेकिन आज, पांच साल बीत चुके हैं और उस भरोसे की कोई झलक नहीं आई। समय की धार ऐसे बहती रही जैसे नदी में पत्थर फेंकने पर पत्थर पानी में डूबता है, लहरें बनाता है, फिर गुम हो जाता है और वही लहरें कुणाल के भीतर पांच साल से उठती हैं। कुणाल ने कभी सोचा नहीं था कि एक दिन पुराने दोस्त की यादें डिजिटल दुनिया में नीली टिक और UPI ट्रांज़ैक्शन की सूचनाओं में बदल जाएंगी।

कुणाल की आँखों के सामने बचपन की यादें तैर रही थीं। अरविंद, कुणाल का बचपन का दोस्त था। “था” कहना अजीब लगता है, क्योंकि दोस्ती को भूतकाल में रखना ठीक नहीं। बचपन में तो दोस्त हमेशा वर्तमान में रहते हैं—साँस की तरह, आदत की तरह। वे दोनों एक ही स्कूल में पढ़ते थे। मिट्टी की खुशबू वाले रास्ते, लकड़ी की बेंच, और टिफिन में आधी-आधी रोटी बाँट लेना—यही उनकी दोस्ती थी। बचपन में दोस्ती किसी समझौते से नहीं बनती। वे साथ खेलते थे, साथ भागते थे, साथ डाँट खाते थे। फिर ज़िंदगी आई। कॉलेज, नौकरी, शहर, जिम्मेदारियाँ और वे अलग-अलग दिशाओं में बहते चले गए। उस समय मोबाइल नहीं थे। न व्हाट्सएप, न कोई “कॉल मी बैक”। संपर्क टूटना आसान था। जो बिछड़ गया, वो सच में बिछड़ गया। अरविंद भी कहीं उसी खामोशी में खो गया था।

उस दिन कुणाल बाज़ार में था। सड़क पर हलचल, दुकानदारों की पुकार, सब्जियों की गंध, चाय की दुकान का धुआँ—सभी चीज़ें उसके चारों ओर जीवंत थीं। कुणाल अदरक की चाय के कुल्हड़ को हाथ में थामे कुछ सोच रहा था कि तभी फोन बजा। अनजान नंबर। “क्या कुणाल बोल रहा है?” “हाँ”, “मैं... अरविंद।” आवाज़ में झिझक थी, जैसे कोई पुरानी अलमारी खोलते वक़्त होती है। कुणाल को लगा जैसे कोई खोई हुई चीज़ मिल गई हो। अरविंद का

नाम सुनते ही कुणाल की आँखों के सामने पच्चीस साल पुराने दिन चमक उठे थे। आवाज़ बदल चुकी थी, लेकिन स्मृति वही थी। “भाई... एक बात कहनी थी।” कुणाल बोला था – “बोलो यार क्या कहना है, बेझिझक बोलो”। “मेरी बेटी... उसकी तबियत बहुत खराब है।” अरविंद की आवाज़ टूटने लगी थी। “इलाज चल रहा है... अस्पताल वाले रोज़ पैसे माँग रहे हैं।” फिर एक लंबी साँस। “मुझे ... तीस हजार रुपये चाहिए।”



किशोर कुमार राही
वरि. लेखापरीक्षा अधिकारी

कुणाल मन ही मन काँप गया था। दिमाग तेज़ी से हिसाब लगाने लगा—किश्त, मज़दूर, सरिया, स्कूल फीस। कुणाल के जीवन में भी उथल-पुथल थी। घर बनवा रहा था। ईंट सीमेंट, मज़दूर, बैंक लोन —हर महीने जेब से पहले दिल खाली हो जाता था। उसकी पत्नी रजनी अक्सर कहती रहती थी — “सब ठीक हो जाएगा जी। थोड़ा वक्त लगेगा।” कुणाल ने धीरे से कहा था, “अरविंद...” “अभी मेरे हालात भी ठीक नहीं हैं। घर का काम चल रहा है... मुझ पर भी बहुत सारा कर्ज़ है।” फोन के उस पार सिसकने की आवाज़ आई थी। “भाई... छः महीने में लौटा दूँगा। भगवान की कसम... बस मेरी बेटी को बचा लो।” अरविन्द रो रहा था। गिड़गिड़ा रहा था। वो अरविंद नहीं था — वो एक लाचार पिता था। कुणाल के भीतर भी कुछ टूट रहा था, पर जेब की सच्चाई ज़्यादा कठोर थी। “मुझे माफ़ कर देना,” कुणाल ने कहा था और फ़ोन कट गया था।

उस रात कुणाल को नींद नहीं आई थी। बार-बार उसकी आवाज़ कानों में गूँजती रही— “बस मेरी बेटी को बचा लो...” कभी इस करवट, कभी उस करवट, उस रात नींद कोसों दूर थी। रजनी, (कुणाल की पत्नी) बोली – क्या हुआ जी, सो क्यों नहीं रहे, क्या परेशानी है। उसने रजनी को सब बता दिया। वो चुपचाप सुनती रही। फिर बोली— “अगर हमारी बेटी होती, तो क्या हम भी किसी से यूँ ही मना सुनते?” कुणाल ने कुछ नहीं कहा था। “किसी से उधार

दाहिनी हो पूर्ण करती है अभिलाषा पूज्य हिंदी भाषा हंसावाहिनी का अवतार है। - अज्ञात





लेकर दे दीजिए,” उसने आगे कहा, “ऐसी परिस्थिति में मदद करना बनता है, अपना समझकर ही मांग रहा न। मदद कर दो, दोस्त की बेटी है।” उस पल कुणाल को लगा—कुछ फैसले दिमाग से नहीं, दिल से लिए जाते हैं और दिल का हिसाब कभी बराबर नहीं बैठता।

अगली सुबह उसने UPI खोला और तीस हजार रुपये जो सीमेंट के लिए रखे थे, भेज दिया। कुछ ही मिनटों में उधर से फोन आया था। “भाई... आप मेरे लिए भगवान समान हो।” वो रोते हुए बोला था। “आज के ज़माने में कौन मदद करता है भला?” “भाई, साला... सबने मना कर दिया था, कई जगह हाथ फैलाया पर किसी ने मदद नहीं की। किसी तरह तेरे भैया से नंबर मंगवाकर तुझे सम्पर्क किया। मुझे भरोसा था तुम हमें निराश नहीं करोगे”।

पैसे भेजने के बाद कुछ दिनों तक अरविंद का फोन लगातार आता रहा था। “भाई, आज बेटी को होश आया है।” “डॉक्टर कह रहे हैं

अब खतरा कम है।” “आप न होते तो...” हर वाक्य के अंत में एक अधूरा सा सिसकता हुआ धन्यवाद होता। कुणाल ज़्यादा कुछ नहीं बोलता। बस “ठीक है”, “भगवान भला करेगा” जैसे छोटे-छोटे वाक्य। रजनी उसकी पत्नी उसे देखकर मुस्कुराते हुए पूछी थी एक दिन — “उसकी बेटी ठीक है न?” कुणाल ने कहा था, “हाँ,” “शायद”। “शायद?” रजनी ने कुणाल की तरफ देखा था। कुणाल का सिर झुक गया था। क्योंकि उस “शायद” में सिर्फ बेटी की तबियत नहीं थी, उसमें दोस्ती, भरोसा और भविष्य — सब उलझा हुआ था।

इस बीच पंद्रह दिन बीते। कुणाल काम से लौटा ही था कि फोन बजा। स्क्रीन पर दिखा-अरविंद। “भाई...” आवाज़

फिर वही भारी। कुणाल के दिल ने पहले ही आशंका पकड़ ली। “फॉलोअप चल रहा है,” वो बोला था - “कुछ टेस्ट फिर से कराने हैं। तीस हजार और चाहिए।” कुणाल के मुँह से अनायास निकल गया—“फिर?” फोन के उस पार एक पल को सन्नाटा छा गया। “मैं जानता हूँ... बहुत हो गया है,” वो बोला, “लेकिन ये आखिरी बार है। बस ये निकल जाए... फिर सब ठीक हो जायेगा।”

कुणाल ने फोन काट दिया था। सीधा बैठ गया। कमरे में अधूरा प्लास्टर था। दीवारों पर सीलन के दाग और कुणाल के मन में डर। इस बार उसने ये सब अपनी पत्नी को नहीं

बताया। डर था—शायद रजनी कह दे, “पैसे के लिए दोस्त बन गया है।” कुणाल नहीं चाहता था कि बचपन का कोई कोना उसकी पत्नी की नजरों में छोटा लगे। कुणाल ने फिर जुगाड़ किया। किसी से उधार लिया और UPI से फिर तीस हजार भेज दिए थे। इस

बार धन्यवाद और ज़्यादा भारी था। “भाई... मैं ज़िंदगी भर नहीं भूलूँगा।” “तुमने मुझे टूटने से बचा लिया।” “मैं छः महीने में सब लौटा दूँगा।” कुणाल चुप रहा था।

छः महीने। छः महीने बहुत लंबा समय होता है, जब आदमी इंतज़ार कर रहा हो। हर महीने की शुरुआत में मन सोचता—शायद आज फोन आएगा। हर महीने के अंत में खुद को समझाता—चलो, कोई बात नहीं। इसी बीच फोन का सिलसिला बदलने लगा। पहले नियमित बात होने लगी थी। फिर हफ्ते में एक बार। फिर महीने में एक-दो बार। वो पूछता था—“आप कैसे हैं?”, क्या चल रहा है, घर में सब कैसे हैं, भाभी कैसी है...., पर अब बस हाल-चाल। कुणाल जानबूझकर फोन नहीं करता था। डर था—कहीं वो ये न





समझ ले कि पैसे के लिए फ़ोन पर तगादा कर रहा है। इसी बीच छः महीने पूरे हुए। उसकी तरफ से कोई फ़ोन नहीं। कोई संदेश नहीं।

एक बार हिम्मत करके कुणाल ने कॉल लगाया था। फ़ोन उठा। “हाँ यार... बोलो।” आवाज़ में पुरानी गर्मजोशी नहीं थी। “बस यूँ ही... हालचाल पूछने।” कुणाल ने कहा। “हाँ सब ठीक है,” उसने जल्दी से कहा था, “अभी थोड़ा बिज़ी हूँ, बाद में बात करते हैं।” अरविन्द ने कहा था और वह बाद में कभी नहीं आया। समय बीतता गया।

एक दिन अचानक व्हाट्सएप पर कॉल आया। इस बार अरविंद नहीं, विभा जी थी, उसकी पत्नी। “भैया, नमस्ते।” “पापा की तबियत बहुत खराब है।” “हॉस्पिटल में एडमिट हैं।” “बीस हजार की ज़रूरत है।” “एक महीने में सारा उधार

लौटा दिया जाएगा।” कुणाल देर तक स्क्रीन देखता रहा। यह “सारा उधार” शब्द अजीब तरह से दिल में चुभा। रजनी रसोई से निकल कर आई। “किसका फ़ोन था?” कुणाल ने रजनी को इस बार भी कुछ नहीं बताया था। वो बोला – “ऑफिस के सहकर्मी थे।”

“मन..., मन तो उसका बहुत कुछ कह रहा था। “कि मैं खुद डूब रहा हूँ। कि ये सिलसिला रुकने का नाम नहीं लेगा। कि दोस्ती और पैसे की राह एक साथ नहीं चलती।” कुणाल ने कहा था लेकिन मन के नीचे कहीं एक और आवाज़ थी— “अगर सच में आखिरी हुआ तो?” कुणाल आशंकित था। फिर भी उसने पैसे भेज दिए थे। उस दिन पहली बार उसे लगा — “मैं मदद नहीं कर रहा, मैं फँसता जा रहा हूँ।” फिर भी वह खुद को समझाता रहा—चलो... आखिरी। लेकिन ज़िंदगी को “आखिरी” शब्द पसंद नहीं। एक साल बीत

गया। एक भी रुपया वापस नहीं आया। फ़ोन अब कभी-कभार ही आता और कुणाल... कुणाल हर बार खुद को यही समझाता—आज नहीं तो कल। उसे नहीं पता था कि आगे आने वाला कल और ज़्यादा भारी होने वाला है।

एक साल बीत जाने के बाद कुणाल ने उधार को लगभग मन से निकाल दिया था। तीस हजार..., फिर तीस हजार..., फिर बीस हजार... उसने खुद से कह लिया था— ये पैसे गए। अगर वो देगा, तो देगा। अगर नहीं, तो शायद यही दोस्ती की कीमत है। अब अगर लौटे भी, तो बोनस समझूँगा। फ़ोन कम हो चुके थे। कभी-कभार त्योहारों पर “हैप्पी दिवाली”। “हैप्पी होली” बस। कुणाल ने ज़्यादा कोशिश भी नहीं की। क्योंकि हर कोशिश के साथ उसके अपने ही सम्मान के टूटने की आवाज़ सुनाई देती थी।



फिर एक दिन सुबह-सुबह व्हाट्सएप पर एक फोटो आई। एक लड़का। अरविंद का बेटा। घुटना छिला हुआ। चेहरे पर चोट। बिस्तर पर लेटा हुआ। साथ में एक मैसेज— “यार, बेटा बाइक से गिर गया है। इलाज के

लिए पच्चीस हजार चाहिए। बहुत मजबूरी है।” कुणाल फ़ोन बंद कर सीधा बैठ गया। इस बार कोई रोना नहीं था। कोई गिड़गिड़ाना नहीं। बस तथ्य। जैसे अब उसे भरोसा हो गया हो कि उसे बस बताना ही काफी है, पैसे तो मिल ही जायेंगे, वह उसका स्वभाव भली भाँति जानता था।

कुणाल उहा पोह में था – ऐसा कब तक चलेगा, पत्नी को बताऊँ या नहीं, पिछली दो बार भी उसके जानकारी के बिना पैसे भेजे थे। उसे तो सिर्फ पहली बार का पता था, जो उसने उधार समझकर नहीं बल्कि मदद समझकर देने बोली थी। वो भूल भी चुकी थी। उसे क्या पता कि ये सिलसिला अभी तक चल रहा है। कुणाल की मनोस्थिति बिलकुल सांप-





छुछुंदर जैसी हो रही थी, न उगलते बन रहा था न निगलते। उसके मन में पहली बार सवाल निकला। “कब तक हम हर चोट, हर बीमारी, हर मजबूरी का इलाज बनते रहेंगे?” रजनी से इस बार भी कुछ नहीं कहा। उसे डर था कि रजनी को पता चलेगा तो सोचेगी – कैसा-कैसा दोस्त पाल रखा है इसने। शायद वो पैसा देने से मना भी करने बोल दे। पर कुणाल जानता था—अगर वो मना करेगा, तो आज रात उसे नींद नहीं आएगी। कुणाल सोच रहा था—ये सब किसी से चर्चा करूंगा तो लोग बेवकूफ ही कहेंगे। उसका मन भी गवाही नहीं दे रहा था। उसे पूरी तरह अंदेशा था कि ये पैसे लौटकर नहीं आने वाले। फिर उसे यह भी लग रहा था कि - अगर नहीं दिया, तो कल खुद से नज़र नहीं मिला पाएगा। उसने पैसे भेज दिए थे। उस दिन उसके हाथ काँप नहीं रहे थे। क्योंकि अब उम्मीद मर चुकी थी। कुछ देर बाद फोन आया था। “भाई, भगवान तुम्हारा भला करे।” “मैं जल्द सब लौटा दूँगा।” कुणाल ने पहली बार जवाब दिया था —“ठीक है।” सिर्फ “ठीक है। कोई भाव नहीं। कोई भरोसा नहीं।

दो साल बीत गये। एक भी रुपया वापस नहीं आया था। कुणाल की पत्नी रजनी का गॉल ब्लाडर की पथरी का और हर्निया का ऑपरेशन होना था। तब कुणाल ने पहली बार खुद फोन किया था—पैसे के लिए। “यार... बस दस-पंद्रह दिन।” वो कहा था। दस-पन्द्रह क्या, बीस दिन बाद फिर फोन करने पर कहता— “अभी फँसा हूँ यार, पंद्रह दिन और।” हर बार तारीख बदल जाती। आवाज़ वही रहती थी। एक बार बोला- “यार तेरा पैसा खाके भागा जा रहा हूँ क्या, देखता हूँ, जल्दी ही दे दूँगा और ये जल्दी कभी आया ही नहीं। देखते-देखते पांच साल बीत गए, जनवरी 2021, अब मई 2026। कुणाल सोच रहा था—एक भी रुपया वापस नहीं आया। अब फोन उठना भी कम हो गया था। कभी घंटी जाती रहती, कभी “Busy”, फिर एक दिन फोन बंद मिला। “जिस नंबर से आप सम्पर्क करना चाहते हैं वह मौजूद नहीं है” वह समझ गया।

कुछ महीनों बाद, किसी तरह उसका नया नंबर जुगाड़ कर कुणाल ने कॉल लगाया था- उसने उठाया। “अरे... तुम कुणाल हो न?” “मैं पहचान नहीं पाया।” उसके इस एक वाक्य ने कुणाल के अंदर बहुत कुछ तोड़ दिया था। “हाँ,”

कुणाल ने कहा था। “यार देखो,” उसकी आवाज़ हल्की हँसी में बदली, “तुम कृष्ण के जैसे हो और मैं ठहरा सुदामा।” “इतना तो चलता है दोस्ती में।” कुणाल ने कुछ नहीं कहा। क्योंकि उसे पता था—सुदामा खाली हाथ नहीं गया था। वो शर्म के साथ गया था और कृष्ण ने उसे राजा बना दिया था। पर यहाँ ना शर्म थी, ना खाली हाथ। सिर्फ सुविधा थी।

उस कॉल के बाद कुणाल ने फोन करना छोड़ दिया। पूरी तरह। अब कुणाल व्हाट्सएप पर स्टेटस लगाता है। कभी बच्चों के साथ फोटो। कभी अधूरा घर। कभी कोई पंक्ति—“कुछ उधार पैसे के नहीं होते, वो भरोसे के होते हैं।” कुणाल उसे टैग करता है। वो देखता है या नहीं, कुणाल को नहीं पता और शायद अब फ़र्क भी नहीं पड़ता। फोन बंद हो जाने के बाद ज़िंदगी बाहर से तो वैसी ही चलती रही, पर भीतर कुछ बदल गया था। कुणाल अब पहले जैसा नहीं रहा। हर बार जब कोई मदद माँगता, तो मन पहले डरता, फिर गुस्सा करता, फिर खुद पर हँस देता। कभी-कभी रात को अचानक नींद टूट जाने पर दिमाग़ हिसाब लगाने लगता—तीस हजार, फिर तीस हजार, फिर बीस, फिर पच्चीस...राशि बड़ी नहीं थी। पर जो कट गया था, वो भरोसा था। कुणाल खुद से पूछता—“क्या मैं बेवकूफ़ था?” “क्या मैंने दोस्ती के नाम पर अपने परिवार का हक़ दाँव पर लगा दिया?” फिर तुरंत दूसरा सवाल आता—“अगर मैं मना कर देता, तो क्या इंसान रह पाता?” “पर दुख पैसे का नहीं है, भरोसे का है” “दुख इस बात का है कि मैंने दिल दिया और सामने वाले ने उसे रसीद समझ लिया।” इन सवालों के बीच कुणाल पिसता रहा। एक रात बहुत देर तक छत को निहारता रहा था। मन में विचार उमड़-धुमड़ रहे थे। कुणाल को अरविंद का पहला फोन याद आया। वो रोता हुआ पिता। वो काँपती आवाज़। वो शब्द—“बस मेरी बेटी को बचा लो...” क्या वो सब झूठ था? या सच था, जो बाद में सुविधा में बदल गया? कुणाल तय नहीं कर पाया। और शायद यही सबसे बड़ा दुख था।

समय के साथ लोगों की तरह यादें भी बदल जाती हैं। अब जब अरविंद का नाम दिमाग़ में आता, तो बचपन वाला दोस्त नहीं आता। UPI ट्रांजेक्शन की हिस्ट्री आ जाती। कुणाल खुद से नाराज़ था कि मैंने कभी साफ़-साफ़ क्यों नहीं कहा— “अब बस।” पर फिर खुद को याद





दिलाता—जिस दिन मैंने मदद की थी, उस दिन कुणाल सही था। गलत अगर कुछ हुआ, तो बाद में। एक दिन बेटे ने पूछा था उससे—“पापा, सुदामा कौन था?” कुणाल ठिठका था। फिर उसने कहानी सुनाई—गरीबी, दोस्ती, कृष्ण। बेटा बोला—“तो कृष्ण ने सुदामा को सब दे दिया?” कुणाल ने कहा था—“हाँ।” वो बोला—“फिर सुदामा ने क्या दिया?” कुणाल के पास जवाब नहीं था। शायद यही सवाल उससे ज़िंदगी पूछ रही थी।

अब कुणाल कॉल नहीं करता। न उम्मीद रखता है। न इंतज़ार करता है। इंतज़ार सिर्फ पैसों का नहीं न था, उसके जमीर के जागने का था। कुणाल बस अपने हिस्से का इंसान होना चाहता है। कभी-कभी स्टेटस डालता है। कभी किसी लाइन में खुद को लिख देता है—“कुछ कर्ज़ लौटाए नहीं जाते, क्योंकि वो पैसे के नहीं होते।” कुणाल उसे टैग करता है। “कभी-कभी उधार लौटाना रकम का नहीं बल्कि रिश्ते का सम्मान होता है”, “उधार केवल नोट नहीं होता, देनेवाले का उर्जा, मेहनत समय और आत्मसम्मान होता है”। “उधार पैसे का नहीं होता, भरोसे का होता है।”; “कुछ लोग मदद को आदत समझ लेते हैं।”; “सुदामा खाली हाथ गया था, खाली मन नहीं।” कुणाल उसे टैग करता था। इस उम्मीद में नहीं कि वो पैसे लौटा देगा—बस इस उम्मीद में कि कुछ तो फर्क पड़े। कुछ तो भीतर हिले। ये उसका आखिरी संवाद है। शायद यही उसका हिसाब।

अब काफी समय हो गया है। ना कोई कॉल। ना कोई मैसेज। ना कोई बहाना। शुरुआत में इस चुप्पी से डर लगता था। अब यही चुप्पी सुकून देने लगी है। कुणाल कभी-कभी सोचता है — अगर अरविंद अचानक सामने आ जाए, तो क्या मैं उससे पैसे माँगूँगा? शायद नहीं। क्योंकि अब वो पैसे नहीं रहे। वो एक कहानी बन चुके हैं। मेरी कहानी। यदि रजनी को ये सब पता चलेगा तो कहेगी—“अब छोड़ दीजिए। जो गया, उसे जाने दीजिए।” कुणाल भी सब छोड़ ही चुका है। पर भूला नहीं है। भूलना शायद मुमकिन नहीं। क्योंकि हर उधार कुछ न कुछ सिखा जाता है। कुणाल को भी सिखा गया कि हर रोता हुआ इंसान लाचार नहीं होता। कि हर धन्यवाद कृतज्ञता के नहीं होते। और हर दोस्ती पैसों की परीक्षा में पास नहीं होती।

कभी-कभी व्हाट्सएप पर पुराने स्टेटस याद करता है। वो वक्त जब वो कुणाल को टैग करता था—“आज भी भगवान ज़िंदा हैं।”; “जो बुरे वक्त में काम आये वो भगवान समान होता है”...। अब स्टेटस कुणाल लगाता है। पर शब्द बदल गए हैं। “कुछ रिश्ते पैसे के साथ नहीं टूटते, पैसे की वजह से टूटते हैं।”; “जब पैसे दिल से दिया जाता है, तो लौटाना जरूरी नहीं।”; “उधार लेना एक कला है और उसे नहीं लौटाना उससे बड़ी कला”; “उधार एक जादू है, देते ही बंदा गायब”; “उधार देने से अक्सर पैसा और मित्र दोनों खो जाते हैं”; “हम तो खुशियाँ उधार देते हैं साहब, पर कोई वक्त पे लौटाता नहीं इसलिए घाटे में हैं”। अरविंद ये सब देखता है या नहीं, कुणाल को नहीं पता और सच कहें तो अब वो जानना भी नहीं चाहता।

एक दिन कुणाल के बेटे ने फिर पूछा था—“पापा, अगर सुदामा वापस कुछ न देता, तो कृष्ण क्या करते?” कुणाल ने उसे मुस्कुरा कर देखा था। फिर कहा था—“कृष्ण देना बंद कर देते, पर इंसान बने रहते। बेटा भी मुस्कुराया था। शायद यही जवाब उसके लिए भी था। उसने अरविंद को माफ़ कर दिया है। उसके लिए नहीं, अपने लिए। क्योंकि नाराज़गी ब्याज की तरह होती है—समय के साथ बढ़ती जाती है। अब अगर कभी वो सामने आए और सिर्फ़ हाल पूछ ले, तो शायद कुणाल मुस्कुरा दे। लेकिन अगर फिर पैसे माँगे—तो कुणाल पहली बार शांति से कह पाएगा—“अब नहीं।” और उस “नहीं” में ना गुस्सा होगा, ना अपराध बोध। बस एक सीखा हुआ इंसान होगा।

कहानी यहाँ खत्म होती है। पर सवाल नहीं। क्योंकि शायद हर किसी की ज़िंदगी में एक अरविंद होता है। और एक ऐसा उधार, जो लौटकर नहीं आता - पर हमें भीतर से बदलकर चला जाता है। कुणाल ने सिर्फ़ उधार ही नहीं दिया था अपना वक्त, मेहनत और भरोसा दिया था। पर वो मुडकर देख भी नहीं रहा, फिर भी वह अरविंद का बुरा नहीं चाहता, यही उसकी कमजोरी है या शायद यही उसकी ताकत। उधार सीधे पैसे का नहीं, एहसान, भरोसे, त्याग का प्रतीक होता है।

**पैसा गया, दोस्त गया और चला गया व्यवहार,
सोच समझकर देना रे भाई फिर से कोई उधार।**

अब हिंदी ही माँ भारती हो गई है- वह सबकी आराध्य है, सबकी सम्पत्ति है। - रवि शंकर शुक्ल





आँख जब खुली

यह कहानी महज एक आविष्कार की नहीं है, बल्कि यह उस ज़िद की कहानी है जो एक बेटे के दिल में अपनी माँ के आँसुओं को देखकर पैदा होती है। यह उस दौर की कहानी है जब दुनिया बारूद की आग में जल रही थी, और एक युवा अपने गाँव की रसोई में नीली लौ जलाने का सपना देख रहा था।

तिलकार गाँव की हवाओं में उस दिन एक अलग ही खुशी थी। गाँव का होनहार लड़का बिनोद कुमार पटना इंजीनियरिंग कॉलेज से मैकेनिकल इंजीनियरिंग की डिग्री लेकर घर लौट रहा था। चौपाल पर बैठे बुजुर्ग बिनोद कुमार की मिसालें दे रहे थे। बिनोद के घर में उसकी माँ, शांति देवी, सुबह से ही पकवान बनाने में जुटी थीं। बिनोद के पिता के गुजर जाने के बाद शांति ने सिलाई और मज़दूरी करके उसे पढ़ाया था। आज उनके संघर्षों का फल घर लौट रहा था, लेकिन बिनोद की यह खुशी बहुत कम दिनों की मेहमान थी। जिस समय बिनोद अपनी माँ के हाथ का बना खाना खा रहा था, उसी समय टीवी स्क्रीन पर 'ब्रेकिंग न्यूज़' चल रही थी—'इराक और इज़राइल के बीच भीषण युद्ध शुरू', मिडिल ईस्ट में तनाव के कारण कच्चे तेल के दामों में ऐतिहासिक उछाल जारी। देखते ही देखते, इस वैश्विक संकट ने भारत के बाज़ारों में हाहाकार मचा दिया। अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में सप्लाई चेन टूट गई। पेट्रोल के दाम रातों-रात आसमान छूने लगे, लेकिन सबसे बड़ा असर रसोई गैस (एलपीजी) पर पड़ा था। गैस सिलेंडरों की कीमत अचानक दोगुनी से भी ज़्यादा हो गई और फिर धीरे-धीरे सप्लाई पूरी तरह से ठप पड़ने लगी। देश, शहरों और गाँवों में पेट्रोल पंपों और गैस एजेंसियों के बाहर मीलों लंबी लाइनें लग गईं। इस अफ़रातफ़री का सबसे ज़्यादा फ़ायदा तिलकार गाँव के इकलौते गैस एजेंट जालिम सिंह ने उठाया। जालिम सिंह एक शांतिर और रसूखदार इंसान था। उसने आपदा को अवसर में बदलते हुए अपने गोदाम में सिलेंडरों की जमाखोरी शुरू कर दी। जो सिलेंडर पहले 1000 रुपये में मिलता था, जालिम सिंह उसे ब्लैक में 3000 से 4000 रुपये में बेचने लगा। जालिम सिंह अपनी दुकान पर बैठे हुए मूँछों पर ताव देकर कहता है कि 'गैस कोई हवा नहीं है, जो मुफ़्त में बहेगी, लेना है तो इस भाव में लो, वरना

घर में लकड़ियां फूँको'।

गांव के गरीब और मध्यम वर्गीय परिवारों के लिए 4000 रुपये का सिलेंडर खरीदना नामुमकिन था। मजबूरन, रामपुर गाँव की औरतें वापस उसी पुराने दौर में लौट गईं, जहाँ से वे सालों पहले निकली थीं। मिट्टी का चूल्हा और लकड़ी का



बिनोद कुमार प्रभात
पर्यवेक्षक

धुआँ। बिनोद की माँ शांति देवी दमा (अस्थमा) की पुरानी मरीज़ थीं। सालों से गैस पर खाना बनाने के कारण उनकी तबीयत ठीक रहती थी, लेकिन अब चूल्हे के धुएँ ने उनके फेफड़ों पर सीधा प्रहार किया। बिनोद रोज़ अपनी माँ को धुएँ के बीच खाँसते हुए, आँखों से पानी पोंछते हुए खाना बनाते देखता। वह छटपटा कर रह जाता। एक रात, धुएँ के कारण शांति को सांस का गंभीर दौरा पड़ा। उनकी सांस उखड़ने लगी और चेहरा नीला पड़ने लगा। बिनोद बहुत घबरा गया। पेट्रोल की कमी और बेतहाशा महंगाई के कारण गाँव में कोई एम्बुलेंस या गाड़ी उपलब्ध नहीं थी। बिनोद अपनी माँ को ठेले पर लिटाकर आधी रात को 5 किलोमीटर दूर सरकारी अस्पताल ले गया। डॉक्टर ने नेबुलाइज़र देकर शांति की जान तो बचा ली, लेकिन बिनोद को चेतावनी देते हुए कहा कि "दवा से ज़्यादा इन्हें धुएँ से आज़ादी की ज़रूरत है, एक और ऐसा दौरा इनकी जान ले सकता है।" अस्पताल के बाहर बैठे बिनोद ने एक गहरी सांस ली। एक तरफ़ उसकी माँ की लाचारी थी और दूसरी तरफ़ जालिम सिंह की गुंडागर्दी। बिनोद ने तय किया कि वह अब सरकार, सप्लाई या जालिम सिंह के रहमो-करम पर नहीं रहेगा।

बिनोद ने अपनी इंजीनियरिंग की किताबें निकालीं। उसका ध्यान 'रिन्यूएबल एनर्जी' और 'बायोगैस' के सिद्धांतों पर गया। तिलकार गाँव में गाय-भैंसों की कोई कमी नहीं थी। गोबर, जो सड़कर मीथेन गैस पैदा करता है, हर तरफ़ उपलब्ध था। बिनोद ने एक 'प्रोटोटाइप बायोगैस प्लांट' बनाने का नक्शा तैयार किया। उसने घर के पिछवाड़े में काम शुरू किया। चूँकि उसके पास पैसे नहीं थे, इसलिए उसने कबाड़खाने से पुरानी पानी की टंकियां, पीवीसी पाइप

हिंदी भाषा की उन्नति का अर्थ है राष्ट्र और जाति की उन्नति। - रामवृक्ष बेनीपुरी





और जंग लगे लोहे के ड्रम खरीदे। जब बिनोद दिन-रात गोबर और कबाड़ के बीच काम करता, तो तिलकार गाँव के बड़े बुजुर्ग उसका मज़ाक उड़ाते थे। गाँव के सरपंच गोवर्द्धन पाण्डे के बेटे मनोज पाण्डे ने तंज कसा कि 'बिनोद इंजीनियर बनने शहर गया था, अब पढ़ लिख कर गाँव में गोबर सान रहा है', उससे अच्छा तो हमसब अनपढ़ है कि कम से कम गोबर से हाथ गंदा नहीं कर रहे हैं'। पड़ोस की औरतें भी ताना मारने लगी हैं- 'अरे शांति, तेरा लड़का तो कबाड़ी बन गया। शांति को बुरा लगता है, लेकिन वह जानती थी कि उसका बेटा जो भी कर रहा है, उसके पीछे कोई बड़ी सोच है। इसी बीच बिनोद की हौसला अफ़ज़ाई के लिए उसकी कॉलेज फ्रेंड मधु तिलकार आ पहुँचती हैं। मधु भी एक मेधावी इंजीनियर हैं और बिनोद की डिज़ाइनिंग में मदद करने लगी। उन दोनों ने मिलकर 'डाइजेस्टर टैंक' बनाया और उसमें पानी और गोबर का मिश्रण डालना शुरू किया।

जालिम सिंह को जब पता चला कि बिनोद कोई गैस बनाने की मशीन बना रहा है, तो उसके कान खड़े हो गए। उसको लगा कि अगर यह लड़का कामयाब हो गया, तो उसकी कालाबाज़ारी का धंधा चौपट हो जाएगा। जालिम सिंह ने अपने गुर्गों के ज़रिए गाँव में अफ़वाह फैला दी कि बिनोद घर में 'गोबर का बम' बना रहा है, "मीथेन एक विस्फोटक गैस है। यह लड़का पूरे मोहल्ले को उड़ा देगा। यह बात आग की तरह गांव में फैल गई। गांव के लोग बिनोद के घर के आस-पास से गुज़रने से भी डरने लगे। जब अफ़वाहों से काम नहीं चला, तो जालिम सिंह ने एक ढोंगी तांत्रिक को गाँव में बुलाया। तांत्रिक ने चौपाल पर बैठकर भविष्यवाणी किया कि —"गोबर को ज़मीन के नीचे सड़ाना धरती माता का अपमान है। यह घोर अपशकुन है, इससे गाँव में महामारी फैलेगी।" भोले-भाले गाँव वाले डर गए। उन्होंने बिनोद पर दबाव डाला कि वह अपना काम बंद कर दे, लेकिन बिनोद और मधु अडिग रहे। बिनोद ने पंचायत से सिर्फ 10 दिन का समय मांगा।

कुछ समयांतराल 10 दिन बीत चुके थे। डाइजेस्टर के अंदर 'एनारोबिक बैक्टीरिया' ने अपना काम कर दिया था और 'बायोगैस' बन चुकी थी। अब सम्पूर्ण गाँव के लोग बिनोद

के घर के बाहर इकट्ठा हो गए, कुछ डर से, कुछ उत्सुकता से और जालिम सिंह अपने गुर्गों के साथ तमाशा देखने के लिए खड़ा हो गया। बिनोद और मधु दोनों ने मिलकर मुख्य वाल्व खोला, तो गैस पाईप से होते हुए रसोई में रखे एक मॉडिफाइड स्टोव तक पहुँच गई। बिनोद ने शांति के हाथ में माचिस दी और कहा कि -माँ, आज तुम इसे जलाओगी। शांति के हाथ कांप रहे थे लेकिन उसने बेटे के खुशी और हौसला अफ़ज़ाई के लिए माचिस की तीली जलाई और बर्नर के पास ले गई। 'फशशश...' की आवाज़ के साथ गैस ने आग पकड़ी और बर्नर से एक तेज़, साफ 'नीली लौ' निकल पड़ी। कोई धुआँ नहीं, कोई कालिख नहीं। यह एकदम एलपीजी गैस की जैसी नीली लौ थी। शांति की आँखों से आँसू छलक पड़े। उसने बिनोद को गले से लगा लिया। घर के बाहर खड़े गाँव वालों की आँखें फटी की फटी रह गईं। जो लोग कल तक उसे कबाड़ी कह रहे थे, आज तालियाँ बजा रहे थे।

यह खबर जालिम सिंह के लिए किसी बम के फटने से कम नहीं थी। उसने तुरंत अपने राजनीतिक रसूख का इस्तेमाल किया। अगले ही दिन जिला प्रशासन और पुलिस की एक टीम बिनोद के घर पहुँच गई। जालिम सिंह ने अधिकारियों को रिश्त देकर बिनोद के प्लांट को 'अवैध, असुरक्षित और बिना मंजूरी के चलने वाला खतरनाक ढांचा' घोषित करवा दिया। पुलिस ने प्लांट को सील कर दिया और बिनोद को चेतावनी दी कि अगर उसने सील तोड़ी, तो उसे जेल में डाल दिया जाएगा। एक बार फिर शांति को उसी धुएँ वाले चूल्हे के सामने बैठना पड़ा। बिनोद दूट सा गया लेकिन मधु ने बिनोद का ढाँढस बढ़ाया और कहा कि बिनोद, यह हारने का नहीं, लड़ने का वक़्त है, अगर वो सिस्टम का इस्तेमाल कर रहा है, तो हम भी करेंगे।

बिनोद को शक था कि जालिम सिंह सिर्फ महंगे दाम पर गैस नहीं बेच रहा, बल्कि कुछ और भी गड़बड़ करता है। एक रात बिनोद और मधु छिपकर जालिम सिंह के गोदाम के पास पहुँचे। वहाँ उन्होंने जो देखा, वह चौंकाने वाला था। जालिम सिंह के आदमी एक मशीन के ज़रिए भरे हुए सिलेंडरों से 2-3 किलो गैस सिलेंडर से निकालकर खाली सिलेंडरों में भर रहे थे। यानी वह न सिर्फ गैस ब्लैक में बेच





रहा था, बल्कि वजन भी कम दे रहा था। बिनोद ने अपने मोबाइल से इस पूरी प्रक्रिया का एक साफ़ वीडियो बना लिया।

जालिम सिंह को भनक लगी कि बिनोद ने उसके करतूत का सब राज जान लिया है तो बौखलाहट में उसने बिनोद को रास्ते से हटाने की योजना बनाई। उसी रात, जालिम सिंह के गुंडे बिनोद कुमार के घर के पिछवाड़े घुस गए। उनका मकसद 'बायोगैस प्लांट' के वाल्व को तोड़कर उसमें आग लगाना था, ताकि एक बड़ा धमाका हो और सारा इल्जाम बिनोद पर आ जाए। गुंडों ने पाइप तोड़ा और आग लगा दी। एक छोटी सी लपट तेज़ी से मुख्य टैंक की तरफ बढ़ने लगी। कुत्तों के भौंकने की आवाज़ से बिनोद की नींद खुल गयी। वह बाहर भागा। यह एक रोंगटे खड़े कर देने वाला दृश्य था। अगर आग टैंक तक पहुँच जाती, तो पूरा घर उड़ जाता। बिनोद ने अपनी जान की परवाह किए बग़ैर आग की लपटों के बीच कूद गया। उसके हाथ बुरी तरह जल गए, लेकिन उसने अपनी जैकेट से आग को बुझाया और गैस का मुख्य वाल्व बंद कर दिया। गुंडे अंधेरे का फ़ायदा उठाकर भाग निकले।

अगले दिन सुबह, बिनोद के जले हुए हाथों और दूटे हुए प्लांट को देखकर पूरा गाँव पंचायत में इकट्ठा हुआ। जालिम सिंह वहाँ पहले से मौजूद था और चिल्ला रहा था, 'मैंने कहा था ना, यह लड़का बम बना रहा है। कल रात इसके प्लांट में आग लग गई थी, इसे गाँव से निकालो'। बिनोद शांत खड़ा था। मधु ने एक सफ़ेद चादर तानी और पंचायत के सामने एक पोर्टेबल प्रोजेक्टर चालू किया और सीधे जालिम सिंह के गोदाम का वह वीडियो प्ले कर दिया। वीडियो में जालिम सिंह अपने आदमियों से कह रहा था कि -'हर सिलेंडर से तीन किलो गैस निकालो'। इन जाहिल गाँव वालों को क्या पता चलेगा। पूरे गाँव में सन्नाटा छा गया। जो औरतें अब तक जालिम सिंह की ज़्यादातियों को मजबूरी समझ कर सह रही थीं, उनका गुस्सा फूट पड़ा। एक बुजुर्ग महिला ने अपनी चप्पल निकाल कर कहा कि 'तू हमारे बच्चों का हक मार रहा था। गाँव वालों ने जालिम सिंह और उसके गुर्गों को घेर लिया। जालिम सिंह के खिलाफ़ सारे सबूत होने के कारण पुलिस

को भी मजबूरन जालिम सिंह को गिरफ़्तार करना पड़ा और इसके साथ ही उसका गोदाम भी सील कर करना पड़ा।

इस घटना के बाद बिनोद का वीडियो सोशल मीडिया पर वायरल हो गया। सोशल मीडिया पर बिनोद कुमार नाम सबके जुबान पर आ गया। देश में रातों रात बिनोद के बारे में चर्चा होने लगी। राज्य सरकार और ज़िला प्रशासन को बिनोद के इस आविष्कार का संज्ञान लेना पड़ा। जिस प्लांट को उन्होंने 'अवैध' कहा था, उसे अब 'ग्रामीण नवाचार (Rural Innovation) का बेहतरीन मॉडल मान लिया गया। सरकार ने बिनोद को फंडिंग दी। कुछ ही महीनों में बिनोद ने अपने घर के छोटे प्लांट को एक विशाल सामुदायिक 'बायोगैस प्लांट' में बदल दिया। पूरे गाँव का गोबर और कचरा एक जगह इकट्ठा होता और हर घर में गैस की पाइपलाइन बिछा दी गई। तिलकार गांव को देश का पहला 'धुआँ मुक्त ऊर्जा गाँव' (Smoke-Free Energy Village) घोषित किया गया।

टीवी पर आज भी खबरें आ रही थीं। मिडिल ईस्ट में युद्ध अभी भी जारी था। दुनिया के बड़े-बड़े देशों में पेट्रोल और गैस की किल्लत थी। अर्थशास्त्री महंगाई पर चिंता जता रहे थे। लेकिन तिलकार गाँव में शांति थी। बिनोद की माँ, शांति देवी, अपनी रसोई में खड़ी थीं। उन्होंने माचिस जलाई। नीली लौ फिर से मुस्कुराई। बिना किसी धुएँ के, बिना किसी खांसी के, उन्होंने बिनोद के लिए चाय बनाई। बिनोद चाय का कप हाथ में लेकर अपने घर की छत पर खड़ा था। उसकी आँखें आसमान की तरफ थीं। उसकी "आँखें खुल चुकी थीं।" उसने समझ लिया था कि भारत की असली ताकत उसके गाँवों में और उसके युवाओं में छिपी है। अब वह अपने हाथ में एक नया नक्शा लिए खड़ा था तिलकार को पूरी तरह से सौर ऊर्जा (Solar Energy) से रोशन करने का नक्शा।

यह कहानी न केवल वर्तमान ऊर्जा संकट और अंतरराष्ट्रीय अस्थिरता के प्रभावों को दर्शाती है, बल्कि यह भी संदेश देती है कि जब युवा अपनी शिक्षा का उपयोग समाज की भलाई के लिए करते हैं, तो कोई भी संकट बड़ा नहीं होता।

हिंदी राष्ट्रभाषा है, इसलिये प्रत्येक व्यक्ति को, प्रत्येक भारतवासी को इसे सीखना चाहिए। - रवि शंकर शुक्ल





गुलमोहर के फूल



सुनैना कुमारी

पत्नी राजेश कुमार नं. 2
वरि. लेखापरीक्षा अधिकारी

हरी डालियों में बिखरे,
रंग-बिरंगे सपने।
कहीं लाल, कहीं पीले,
बैंगनी, नारंगी चमकीले।
गुलमोहर के फूल।

जेठ की दुपहरी में,
हवा संग लहराते,
हँसते, खिलखिलाते।
कभी पत्तियों में छुप जाते,
गुलमोहर के फूल।

नीले-नीले आसमान की ओर,
खड़ा है वृक्ष बाहें फैलाए।
हाथों में लेके जैसे अंगारे।
लाल नारंगी धधकते शोले।
गुलमोहर के फूल।

रंगों की बौछार लिए,
शीतलता और प्यार लिए,
सँवरते, सजते, खुद में इठलाते,
धरती को रंगीन बनाते।
गुलमोहर के फूल।

बैठी हूँ इसके शीतल छांव में,
बिखरे पड़े हैं सारे मेरे पांव में।
मेरे बालों से फिसल जाते।
गालों को सहलाते, शरमाते।
गुलमोहर के फूल।



हिंदी प्रांतीय भाषा नहीं बल्कि वह अंतःप्रांतीय राष्ट्रभाषा है। - छविनाथ पांडेय





नवादा जिला

(इतिहास, संस्कृति और विरासत का संगम)

नवादा दक्षिण बिहार का एक महत्वपूर्ण जिला है। समय के साथ नवादा शिक्षा, सड़क, स्वास्थ्य और अन्य क्षेत्रों में विकास कर रहा है। इसकी स्थापना वर्ष 1973 में हुई थी। इसके उत्तर में नालंदा जिला, पूर्व में शेखपुरा और जमुई, पश्चिम में गया तथा दक्षिण में झारखंड राज्य स्थित है। नवादा का कुल क्षेत्रफल 2,500 वर्ग किलोमीटर है। यहाँ की जलवायु सामान्यतः उष्णकटिबंधीय है। यह अपने ऐतिहासिक महत्व, प्राकृतिक सुंदरता, धार्मिक स्थलों और सांस्कृतिक विरासत के लिए जाना जाता है। हिंदी यहाँ की प्रमुख भाषा है, जबकि मगही भी बड़े पैमाने पर बोली जाती है। नवादा सड़क और रेल मार्गों से बिहार के अन्य जिलों से जुड़ा हुआ है। राष्ट्रीय और राज्य राजमार्गों के माध्यम से यहाँ आवागमन की अच्छी सुविधा उपलब्ध है।

नवादा की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि पर आधारित है। यहाँ धान, गेहूँ, मक्का, दलहन और तिलहन जैसी फसलें उगाई जाती हैं। इसके अलावा पशुपालन, डेयरी और छोटे व्यापार भी लोगों की आय के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। सरकार द्वारा किसानों को आधुनिक कृषि तकनीकों और योजनाओं का लाभ दिया जा रहा है, जिससे उत्पादन में वृद्धि हो रही है।

नवादा में कई प्रसिद्ध पर्यटन और धार्मिक स्थल हैं, जो पर्यटकों को आकर्षित करते हैं :

- 1) ककोलत जलप्रपात - ककोलत जलप्रपात नवादा में सबसे प्रसिद्ध पर्यटन स्थल है। यह पहाड़ियों के बीच स्थित एक सुंदर जल प्रपात है। गर्मियों में यहाँ बड़ी

संख्या में पर्यटक घूमने आते हैं। इसकी प्राकृतिक सुंदरता लोगों को बहुत आकर्षित करती है। यहाँ का नज़ारा लोगों को स्वर्ग जैसा लगता है।

- 2) गुनावां जी जल मंदिर - यह जैन धर्म का एक महत्वपूर्ण तीर्थस्थल है। देश-विदेश से श्रद्धालु यहाँ दर्शन के लिए आते हैं।



राहुल रंजन
वरिष्ठ लेखापरीक्षक

यहाँ लोकगीत, लोकनृत्य और पारंपरिक रीति-रिवाज आज भी प्रचलित हैं। विवाह और अन्य सामाजिक समारोहों में लोक संगीत का विशेष महत्व होता है। छठ पूजा यहाँ का सबसे प्रमुख त्योहार है। इस अवसर पर लोग सूर्यदेव की पूजा करते हैं और नदियों तथा तालाबों के किनारे अर्घ्य देते हैं। यह पर्व सामाजिक एकता और श्रद्धा का प्रतीक है।

नवादा में शिक्षा के क्षेत्र में लगातार विकास हो रहा है। जिले में अनेक सरकारी और निजी विद्यालय हैं। इसके अलावा, कई महाविद्यालय और तकनीकी संस्थान भी मौजूद हैं। सरकार द्वारा चलाए जा रहे विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों से बच्चों को शिक्षा प्राप्त करने में सहायता मिल रही है। आजकल नवादा के विद्यार्थी इंजीनियरिंग, चिकित्सा, प्रशासन और अन्य क्षेत्रों में भी सफलता प्राप्त कर रहे हैं। डिजिटल तकनीकों और पुस्तकालय के विकास से छात्रों को नई सुविधाएं मिल रही हैं।



जब हिंदी की चर्चा करते हैं तो वह हिंदी संस्कृति का एक प्रतीक होती है। - शांतानंद नाथ





कर्म और भाग्य



बीरेन्द्र यादव
वरिष्ठ लेखापरीक्षक

कर्म और भाग्य, दोनों का है खेल,
एक बिना दूसरा अधूरा-सा मेल।
कर्म से बनती है जीवन की राह,
भाग्य का साथ फिर चलता है साथ॥

कर्म से हम बनाते हैं अपनी स्थिति,
भाग्य से मिलती है कभी सुख, कभी दुख।
जो करते हैं मेहनत, उनकी किस्मत चमकती है,
कभी भाग्य भी उसकी ओर झुकी होती है॥

भाग्य कभी स्थिर नहीं,
कर्म से उसकी दिशा होती है तय।
सच्ची मेहनत का न कोई तोड़ है,
भाग्य के साथ मिलकर भी उसका है राजी फैसला॥

तो कर्म करो सच्चे मन से, अपना भाग्य खुद बनाओ।
भाग्य खुद चलेगा, जब कर्म से उसे पाओ॥





दो युगों के संधिकाल पर खड़ा भारत

जब भी मैं अपनी आँखें मूँदकर अपने बचपन के दिनों को याद करता हूँ, तो मन अनायास ही उन सुनहरे, धूल भरे और सुकून से भरे पलों में खो जाता है, जहाँ जीवन की परिभाषा बेहद सादगीपूर्ण थी। वह एक ऐसा दौर था जहाँ रिश्तों में औपचारिकता नहीं, बल्कि आत्मीयता का गाढ़ा रंग था। छोटी-छोटी खुशियों में पूरा संसार सिमट जाता था—जैसे बारिश की पहली बूँद पर कागज़ की कश्ती चलाना या चवन्नी-अठन्नी में दुनिया की सबसे बड़ी दौलत पा लेना। जब मैं आज का भारत देखता हूँ, तो गर्व से सीना चौड़ा हो जाता है। आज का भारत आधुनिकता, गगनचुंबी इमारतों, 5G तकनीक, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, तेज़ रफ्तार जीवनशैली और वैश्विक आर्थिक महाशक्ति बनने की राह पर अग्रसर एक जीवंत राष्ट्र है। लेकिन, इस चमक-दमक के बीच जब मैं पीछे मुड़कर देखता हूँ, तो महसूस होता है कि बचपन का भारत भावनाओं, संस्कारों और अनकही आत्मीयता से समृद्ध भारत था।

उस समय भौतिक सुविधाएँ सीमित थीं, परंतु मन का संतोष असीमित था। लोग कम साधनों में भी खिलखिलाकर हँसना और जीना जानते थे। बचपन का भारत और आज का भारत केवल कैलेंडर के पन्नों का बदलना या समय का एक अंतराल मात्र नहीं है; यह भारतीय मानस की बदलती सोच, बदलती जीवनशैली, टूटते और नए रूप में बनते सामाजिक ढाँचे तथा बदलती प्राथमिकताओं का एक सजीव रेखाचित्र है। यह इस बात का अध्ययन है कि कैसे एक देश ने अपनी आत्मा के कुछ हिस्सों को पीछे छोड़ते हुए भौतिक प्रगति के नए शिखरों को छुआ है।

सुबह का बदलता परिदृश्य : अलार्म की कर्कशता बनाम प्रकृति का संगीत

बचपन में दिन की शुरुआत किसी स्मार्टफोन की कर्कश रिंगटोन या सोशल मीडिया के नोटिफिकेशन से नहीं होती थी। सुबह की पहली किरण के साथ ही कानों में पक्षियों की चहचहाहट, विशेषकर गौरैया की चीं-चीं, कौवों

की कांव-कांव और कोयल की कूक रस घोलती थी। घरों के आँगन में झाड़ू की सरसराहट, रसोई से आती बर्तनों की खनक, पीतल के लोटे में पानी भरने की आवाज़ और पास के किसी मंदिर से गूँजती घंटियों व भजनों की ध्वनि स्वतः ही नींद खोल देती थी। लोग सुबह जल्दी उठने को एक पवित्र नियम मानते थे। हवा इतनी शुद्ध होती थी कि फेफड़े साफ़ हवा से भर जाते थे। घरों के सामने, छतों पर या बालकनियों में छोटे-मोटे पेड़-पौधे, तुलसी का चौरा और नीम के पेड़ होते थे, जो वातावरण में एक दिव्य शांति और सकारात्मकता का संचार करते थे।



सोनू कुमार सिंह
डी.ई.ओ.

आज की सुबह : स्क्रीन का उजाला और भागदौड़

इसके विपरीत, आज के भारत में सुबह की तस्वीर पूरी तरह यांत्रिक हो चुकी है। अब आँखें खुलते ही सबसे पहले इंसान का हाथ तकिए के नीचे या साईड टेबल पर रखे मोबाइल फोन को ढूँढता है। जागते ही हम प्रकृति के दर्शन करने के बजाय व्हाट्सएप, इंस्टाग्राम और ई-मेल के स्क्रीन की नीली रोशनी में डूब जाते हैं। पक्षियों की जगह अब गाड़ियों के हॉर्न, पानी के मोटर की आवाज़ और अलार्म के डिजिटल शोर ने ले ली है।

शहरीकरण ने पेड़ों और गौरैया को हमसे छीन लिया है। कंक्रीट के जंगलों में अब सुबह की वह शांति नहीं मिलती, बल्कि एक अजीब सा तनाव और भागदौड़ दिखाई देती है, जहाँ हर कोई घड़ी की सुइयों के पीछे भाग रहा है। सुबह का वह सुकून, जो पूरे दिन के लिए ऊर्जा देता था, अब केवल 'मॉर्निंग वॉक' के एक मैकेनिकल रूटीन में तब्दील हो चुका है।

यदि किसी के घर में कोई विपदा आ जाए, कोई बीमार हो जाए या किसी की बेटी की शादी हो, तो पूरा मोहल्ला अपनी व्यक्तिगत व्यस्तताओं को छोड़कर उस घर की मदद के लिए उठ खड़ा होता था। बच्चों पर पूरे मोहल्ले के बड़ों का समान अधिकार होता था; अगर आप गली में कोई

हिंदी भाषा और हिंदी साहित्य को सर्वांगसुंदर बनाना हमारा कर्तव्य है। - डॉ. राजेंद्र प्रसाद





शरारत कर रहे हैं, तो पड़ोस के चाचा या ताऊ आपको डाँट भी सकते थे और थप्पड़ भी मार सकते थे और घर आने पर माता-पिता इस बात पर नाराज़ होने के बजाय उन्हीं का साथ देते थे।

आज की महानगरीय संस्कृति और एकाकीपन

आज के आधुनिक भारत में, विशेषकर बड़े शहरों और बहुमंजिला सोसायटियों में, निजता के नाम पर लोग खुद को लोहे के मजबूत दरवाजों के पीछे बंद कर चुके हैं। एक ही फ्लोर पर रहने वाले दो परिवारों को सालों-साल यह पता नहीं होता कि उनके सामने वाले घर में कौन रहता है, उसका नाम क्या है या वह क्या काम करता है। लोग लिफ्ट में एक साथ खड़े होते हैं, लेकिन आपस में बात करने के बजाय अपने-अपने फोन की स्क्रीन स्कॉल करने में व्यस्त रहते हैं।

व्यस्तता इतनी बढ़ गई है कि किसी के पास दूसरे के लिए दो मिनट का समय नहीं है। आज साधन बहुत हैं—हमारे पास क्लब हाउस हैं, किटी पार्टियाँ हैं, सोसाइटी गेट-टुगेदर हैं, लेकिन उनमें वह पुराना अपनापन नहीं, बल्कि एक औपचारिक प्रदर्शन अधिक दिखाई देता है। पहले लोगों के पास धन कम था पर दिल बड़े थे, आज फ्लैट्स के दाम करोड़ों में हैं पर दिलों की दूरियाँ मीलों लंबी हो चुकी हैं।

संयुक्त परिवारों का बिखराव और एकल परिवारों का उदय

मेरे बचपन के समय में संयुक्त परिवार भारतीय समाज की रीढ़ और हमारी सबसे बड़ी सांस्कृतिक पहचान हुआ करते थे। एक ही छत के नीचे दादा-दादी, माता-पिता, चाचा-चाची, ताऊ-ताई और दर्जनो भाई-बहन मिलकर रहते थे। घर में कभी सन्नाटा नहीं होता था; हमेशा एक उत्सव सा माहौल, हँसी-ठिठोली और रौनक बनी रहती थी। ऐसे परिवारों में बच्चों का पालन-पोषण केवल माता-पिता की जिम्मेदारी नहीं होती थी, बल्कि वे पूरे परिवार के प्यार की छाँव में पलते थे।

विशेषकर दादा-दादी और नाना-नानी का सानिध्य हमारे जीवन का सबसे अनमोल उपहार था। रात के समय, जब अक्सर बिजली चली जाया करती थी (जो कि उस दौर की एक आम समस्या थी), तो वह संकट नहीं बल्कि एक अवसर बन जाता था। पूरा परिवार घर के आँगन या छत पर चारपाइयाँ बिछाकर बैठ जाता था। हवा के झोंकों के बीच, हाथ के पंखे झेलते हुए, हम सब भाई-बहन दादी या नानी को घेरकर बैठ जाते थे।

उनकी कहानियों की पोटली खुलती थी—राजा-रानी, परियों, बुद्धिमान तेनालीराम, पंचतंत्र की शिक्षाप्रद कथाओं से लेकर रामायण-महाभारत के वीर योद्धाओं के किस्से। उन कहानियों में केवल मनोरंजन नहीं होता था, बल्कि अनजाने में ही हमारे भीतर ईमानदारी, साहस, बड़ों का सम्मान और नैतिक मूल्यों के बीज बो दिए जाते थे।



एकल परिवारों की विवशता और स्वतंत्रता का मूल्य

आज की आधुनिक, महानगरीय और कॉर्पोरेट जीवनशैली ने इन बड़े और भरे-पूरे परिवारों को तोड़कर छोटे-छोटे एकल परिवारों में तब्दील कर दिया है। उच्च शिक्षा, करियर की अंधी दौड़, आईटी सेक्टर का उदय और बेहतर नौकरियों की तलाश में युवाओं को अपने पैतृक गाँवों और शहरों को छोड़कर बंगलौर, पुणे, गुडगांव या विदेशों का रुख करना पड़ा। परिणाम यह हुआ कि परिवार सिमटकर पति-पत्नी और एक या दो बच्चों तक सीमित रह गए।

इस व्यवस्था ने व्यक्ति को आर्थिक स्वतंत्रता, काम करने की आज़ादी और अपनी शर्तों पर जीने की सहूलियत तो दी है, लेकिन इसके बदले में जो भावनात्मक नुकसान हुआ है, उसकी भरपाई नामुमकिन है। आज के बच्चे वर्किंग पेरेंट्स (कामकाजी माता-पिता) के कारण अक्सर 'डे-केयर' या 'क्रेच' में पल रहे हैं, या फिर घर पर अकेले 'आया' (दाई) के भरोसे रहते हैं। उनके पास कहानियाँ सुनाने वाली दादी नहीं है, बल्कि उनकी जगह यूट्यूब के वीडियो और आईपैड

हिंदी साहित्य की नक़ल पर कोई साहित्य तैयार नहीं होता। - सूर्यकांत त्रिपाठी निराला





ने ले ली है। इससे बच्चों में स्वतंत्रता और निर्णय लेने की क्षमता तो आ रही है, लेकिन वे कहीं न कहीं एकाकीपन, चिड़चिड़ेपन और अवसाद का शिकार भी हो रहे हैं। बुजुर्ग जो कभी घर के बरगद हुआ करते थे, आज ओल्ड एज होम्स में या अपने पैतृक घरों में अकेलेपन से जूझ रहे हैं।

वर्चुअल स्क्रीन और इनडोर बचपन

आज के बच्चों के खेल मैदानों में नहीं, बल्कि प्लेस्टेशन, एक्सबॉक्स या मोबाइल पर खेले जाने वाले गेम्स जैसे 'पबजी', 'फ्री फायर', या वर्चुअल रेसिंग तक सीमित हैं। वे फुटबॉल या क्रिकेट मैदान पर पसीना बहाकर नहीं, बल्कि फीफा गेम में उंगलियाँ चलाकर खेलते हैं। आज के बच्चों के पास खेलने के लिए समय भी कम है, क्योंकि उन पर स्कूल के भारी बस्ते के साथ-साथ ट्यूशन, कोडिंग क्लासेस, पियानो और कराटे क्लासेस का भारी दबाव है।

अगर उन्हें फुर्सत मिलती भी है, तो वे यूट्यूब पर रील्स या शॉर्ट्स स्कॉल करने में अपनी कीमती ऊर्जा नष्ट करते हैं।

इसका नतीजा यह हो रहा है कि आज भारत के बच्चे कम उम्र में ही मोटापे, आँखों की कमजोरी (चश्मा लगाना), विटामिन-डी की कमी और डिजिटल एडिक्शन जैसी गंभीर समस्याओं से जूझ रहे हैं। वे तकनीक के मामले में हमसे कहीं आगे और बेहद स्मार्ट हैं, लेकिन सामाजिक व्यवहार, सहनशीलता और वास्तविक मित्रता के मामले में कहीं न कहीं पीछे छूट गए हैं।

गर्मियों की छुट्टियाँ और नानी का घर: एक खोया हुआ स्वर्ग

बचपन के भारत में 'गर्मियों की छुट्टियाँ' कोई आम छुट्टियाँ नहीं होती थीं, वे हमारे लिए साल का सबसे बड़ा उत्सव, एक वार्षिक उत्सव हुआ करती थीं। मार्च-अप्रैल में परीक्षा समाप्त होते ही हम दिनों की गिनती शुरू कर देते थे कि कब मई का महीना आएगा और कब 'नानी के घर'

जाने का बुलावा आएगा। उस समय नानी के घर जाने की यात्रा अपने आप में एक अद्भुत रोमांच था। नॉन-एसी, थ्री-टियर या जनरल बोगी वाले रेलवे डिब्बे में खिड़की वाली सीट के लिए भाई-बहनों में होने वाली लड़ाई, खिड़की से बाहर भागते हुए टेलीफोन के खंभे, हरे-भरे खेत, नदियों पर बने लोहे के पुलों की गड़गड़ाहट देखना मन को रोमांचित कर देता था। स्टेशनों पर आने वाली आवाजें—"चाय गरम!", "गरमा-गरम समोसे!", "टाइमपास मूँगफली!"—आज भी कानों में मिश्री की तरह घुलती हैं।

नानी के घर पहुँचते ही नियम-कानूनों की सारी दीवारें ढह

जाती थीं। वहाँ मामा, मौसी के बच्चों के साथ मिलकर एक पूरी फौज तैयार हो जाती थी। पूरा दिन आम के बगीचों में बिताना, पत्थरों से कच्चे आम (अमियां) तोड़ना, उन पर नमक-मिर्च लगाकर खाना, कुएं या नलकूप (ट्यूबवेल) के ठंडे पानी में घंटों नहाना और रात को घर की खुली छत पर

सफेद सूती चादरों पर लेटकर आसमान में टिमटिमाते अनगिनत तारों को देखना तथा टूटते तारे को देखकर मन्नत माँगना—यह वह सुख था जिसकी तुलना आज दुनिया के किसी भी सेवन-स्टार रिजॉर्ट से नहीं की जा सकती। नानी का वह बिना शर्त का प्यार, मामी के हाथ के बने पापड़-अचार और घी-शक्कर लगी रोटियों का स्वाद आज भी जुबान पर ज़िंदा है।

स्मार्टफोन, इंस्टेंट मैसेजिंग और वर्चुअल दूरियाँ

आज के डिजिटल भारत में मोबाइल फोन, हाई-स्पीड इंटरनेट और सोशल मीडिया (व्हाट्सएप, इंस्टाग्राम, फेसबुक) ने संचार की दुनिया में एक युगांतकारी क्रांति ला दी है। आज दुनिया के किसी भी कोने में बैठे व्यक्ति से हम कुछ ही मिलीसेकंड में न केवल बात कर सकते हैं, बल्कि वीडियो कॉल के जरिए उसे लाइव देख भी सकते हैं। ई-



भाषा के उत्थान में एक भाषा का होना आवश्यक है। इसलिये हिंदी सबकी साझा भाषा है। - पं. के. रंगानाथ पिल्लयार





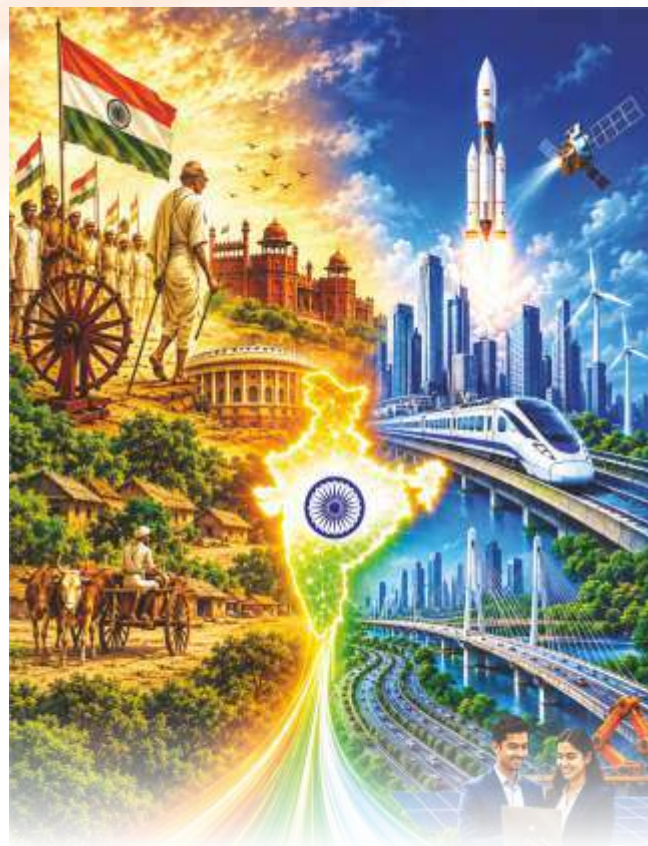
मेल, ऑनलाइन बैंकिंग, डिजिटल भुगतान (यूपीआई) जैसी सुविधाओं ने जीवन को अभूतपूर्व रूप से सुगम, तेज़ और कुशल बना दिया है। लेकिन एक ही डाइनिंग टेबल पर बैठा पूरा परिवार एक-दूसरे से बात करने के बजाय अपने-अपने फोन में मग्न रहता है। इसे समाजशास्त्रियों ने 'अलोन टुगेदर' (साथ होकर भी अकेले होना) का नाम दिया है। तकनीक ने दूरियों को तो मिटा दिया, लेकिन नजदीकियों के बीच एक बहुत बड़ी डिजिटल दीवार खड़ी कर दी है।

आधुनिक भारत की उपलब्धियाँ : एक वैश्विक महाशक्ति का उदय

यहाँ तक की चर्चा में यदि ऐसा प्रतीत होता है कि मैं केवल अतीत के रोने रो रहा हूँ, तो यह अधूरी तस्वीर होगी। आज के भारत की प्रगति और उसकी वैज्ञानिक, आर्थिक तथा सामाजिक उपलब्धियों को देखकर मेरा मस्तक गर्व से ऊँचा हो जाता है। आज का भारत वह भारत नहीं है जिसे कभी 'सपेरो और जादूगरो का देश' कहकर चिढ़ाया जाता था। आज का भारत एक परमाणु शक्ति संपन्न, अंतरिक्ष विज्ञान में दुनिया के शीर्ष देशों में शुमार और दुनिया की पाँचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है।

अंतरिक्ष, विज्ञान और तकनीक में तिरंगे की धमक

हमारा इसरो आज दुनिया की सबसे विश्वसनीय और किफायती अंतरिक्ष एजेंसी बन चुका है। चंद्रमा के दक्षिणी ध्रुव पर 'चंद्रयान' को सफलतापूर्वक उतारने वाला भारत दुनिया का पहला देश बना। मंगलयान की सफलता ने हमारी वैज्ञानिक प्रतिभा को पूरी दुनिया में स्थापित किया। रक्षा के क्षेत्र में आज हम 'आत्मनिर्भर' बन रहे हैं; तेजस लड़ाकू विमान, आई.एन.एस. विक्रांत युद्धपोत और ब्रह्मोस जैसी मिसाइलें हमारी सैन्य शक्ति का लोहा मनवा रही हैं। डिजिटल इंडिया के तहत विकसित 'यूपीआई' सिस्टम की तारीफ आज अमेरिका और यूरोप के बड़े-बड़े विशेषज्ञ कर रहे हैं। भारत के सुदूर गाँवों में एक सब्जी बेचने वाला भी आज क्यूआर कोड के जरिए डिजिटल भुगतान ले रहा है, यह एक अभूतपूर्व सामाजिक-तकनीकी क्रांति है।



उपसंहार : अतीत की जड़ों और भविष्य के पंखों का आदर्श संतुलन

बचपन के भारत और आज के भारत की इस लंबी, भावुक और विश्लेषणात्मक यात्रा के अंत में जब मैं दोनों युगों को तराजू के दो पलड़ों पर रखता हूँ, तो मेरा मन किसी एक के पक्ष में पूरी तरह नहीं झुक पाता। यह सच है कि बचपन के भारत में एक जादुई सुकून था, आत्मीयता की मिठास थी और सादगी का सौंदर्य था, जिसे हर वो व्यक्ति मिस करता है जिसने उस दौर को जिया है।

वास्तविक और संपूर्ण विकास वही है जहाँ अतीत की जड़ें और भविष्य के पंख दोनों एक साथ काम करें। हमें आज के भारत की वैज्ञानिक प्रगति, आर्थिक समृद्धि और डिजिटल रफ्तार को अपनाना ही होगा, लेकिन इसके साथ ही हमें अपने बचपन के भारत की उस आत्मीयता, संयुक्त परिवारों के प्रेम, त्योहारों के उल्लास, प्रकृति के प्रति सम्मान और मानवीय संवेदनाओं को भी जीवित रखना होगा।

हिंदी हमारी देश और भाषा की प्रभावशाली विरासत है। - माखनलाल चतुर्वेदी





भारत की परमाणु यात्रा

भारत की परमाणु यात्रा आधुनिक भारत के इतिहास का वह अध्याय है जिसने न केवल देश की सुरक्षा नीति को नया स्वरूप दिया, बल्कि भारत को विश्व राजनीति में एक सम्मानजनक और प्रभावशाली स्थान भी प्रदान किया। यह यात्रा केवल परमाणु हथियार प्राप्त करने की कहानी नहीं है, बल्कि यह आत्मनिर्भरता, वैज्ञानिक चेतना, राष्ट्रीय स्वाभिमान और कठिन परिस्थितियों में दृढ़ संकल्प की कहानी भी है। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत आर्थिक रूप से कमजोर, तकनीकी रूप से पिछड़ा और सुरक्षा की दृष्टि से असुरक्षित राष्ट्र था। विभाजन की त्रासदी, सीमाई विवाद, विदेशी शक्तियों का दबाव और पड़ोसी देशों की आक्रामक नीतियाँ भारत के सामने गंभीर चुनौतियाँ थीं। ऐसे समय में भारत के नेताओं ने यह समझ लिया था कि यदि देश को भविष्य में सुरक्षित और सशक्त बनाना है, तो विज्ञान और तकनीक को राष्ट्रीय विकास का आधार बनाना होगा। इसी सोच ने भारत की परमाणु यात्रा की नींव रखी।

स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू विज्ञान और आधुनिकता के प्रबल समर्थक थे। उनका विश्वास था कि विज्ञान केवल प्रयोगशालाओं तक सीमित विषय नहीं है, बल्कि यह राष्ट्र निर्माण का सबसे बड़ा माध्यम है। नेहरू जी ने भारत में वैज्ञानिक संस्थानों की स्थापना को प्राथमिकता दी और परमाणु विज्ञान को विशेष महत्व दिया। इसी समय भारतीय वैज्ञानिक डॉ. होमी जहांगीर भाभा ने भारत के परमाणु कार्यक्रम की आधारशिला रखी। उन्होंने 1945 में टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और बाद में 1948 में परमाणु ऊर्जा आयोग के गठन में भी उनका बड़ा योगदान रहा। भाभा का सपना था कि भारत विज्ञान के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बने और परमाणु ऊर्जा का उपयोग केवल

हथियारों के लिए नहीं बल्कि ऊर्जा उत्पादन, कृषि, चिकित्सा और औद्योगिक विकास के लिए भी करे।

भारत का प्रारंभिक परमाणु कार्यक्रम पूरी तरह शांतिपूर्ण उद्देश्यों पर आधारित था। उस समय दुनिया द्वितीय विश्व युद्ध के बाद शीत युद्ध की राजनीति में उलझ चुकी थी।

अमेरिका और सोवियत संघ परमाणु हथियारों की होड़ में लगे हुए थे। हिरोशिमा और नागासाकी पर परमाणु बमों के विनाशकारी प्रभाव ने पूरी दुनिया को भयभीत कर दिया था। भारत ने इस विनाशकारी शक्ति को युद्ध के बजाय विकास के लिए उपयोग करने की नीति अपनाई। 1950 और 1960 के दशक में भारत ने कई परमाणु अनुसंधान रिएक्टर स्थापित किए। "अप्सरा" भारत का पहला परमाणु रिएक्टर था, जो एशिया का भी पहला अनुसंधान रिएक्टर बना। इसके बाद "सिरस" और अन्य रिएक्टरों ने भारत को परमाणु अनुसंधान में आगे बढ़ने का अवसर दिया।

पोखरण : परमाणु कार्यक्रम का आरंभ

हालाँकि भारत का परमाणु कार्यक्रम प्रारंभ में शांतिपूर्ण था, लेकिन अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों और क्षेत्रीय सुरक्षा चुनौतियों ने धीरे-धीरे इसे सामरिक दिशा प्रदान की।



1962 का भारत-चीन युद्ध भारत के लिए एक गहरा आघात था। चीन के साथ इस युद्ध में भारत को भारी नुकसान उठाना पड़ा। इस युद्ध ने भारतीय नेतृत्व को यह महसूस कराया कि केवल आदर्शवाद और शांति की नीति से राष्ट्रीय सुरक्षा सुनिश्चित नहीं की जा सकती। स्थिति तब और गंभीर

हो गई, जब 1964 में चीन ने अपना पहला परमाणु परीक्षण कर लिया। अब भारत के सामने एक ऐसा पड़ोसी



नितेश कुमार

सहा. लेखापरीक्षा अधिकारी

हिंदी सरल भाषा है। इसे अनायास सीखकर लोग अपना काम निकाल लेते हैं। - जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी





था जो न केवल सैन्य रूप से शक्तिशाली था बल्कि परमाणु हथियारों से भी लैस था। दूसरी ओर पाकिस्तान भी धीरे-धीरे भारत विरोधी नीतियों को आगे बढ़ा रहा था। 1965 के युद्ध और बाद में 1971 के युद्ध ने यह स्पष्ट कर दिया कि दक्षिण एशिया में स्थायी शांति आसान नहीं है।

1971 के भारत-पाकिस्तान युद्ध में भारत की निर्णायक विजय हुई और बांग्लादेश का निर्माण हुआ। इस हार के बाद पाकिस्तान ने परमाणु हथियारों को अपनी सुरक्षा नीति का मुख्य आधार बना लिया। पाकिस्तान के नेता जुल्फिकार अली भुट्टो ने कहा था कि "हम घास खाएँगे, लेकिन परमाणु बम बनाएँगे।" इस बयान ने भारत के लिए खतरे की गंभीरता को और स्पष्ट कर दिया। इसी पृष्ठभूमि में भारत ने अपने परमाणु कार्यक्रम को नई दिशा देने का निर्णय लिया।

18 मई 1974 को भारत ने राजस्थान के पोखरण में अपना पहला भूमिगत परमाणु परीक्षण किया। इस परीक्षण को "स्माइलिंग बुद्ध" नाम दिया गया। उस समय भारत की प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी थीं। उन्होंने अत्यधिक अंतरराष्ट्रीय दबाव और संभावित प्रतिबंधों के बावजूद इस परीक्षण की अनुमति दी। यह केवल एक वैज्ञानिक उपलब्धि नहीं थी, बल्कि यह भारत की रणनीतिक स्वतंत्रता और राष्ट्रीय आत्मविश्वास का प्रतीक बन गया। भारत ने इसे शांतिपूर्ण परमाणु विस्फोट बताया, लेकिन विश्व समुदाय ने इसे परमाणु हथियार क्षमता की दिशा में महत्वपूर्ण कदम माना।

इस परीक्षण के बाद अमेरिका और कई पश्चिमी देशों ने भारत पर तकनीकी और आर्थिक प्रतिबंध लगा दिए। परमाणु सामग्री और तकनीक की आपूर्ति रोक दी गई। लेकिन, इन प्रतिबंधों ने भारत को कमजोर करने के बजाय आत्मनिर्भर बनने के लिए प्रेरित किया। भारतीय वैज्ञानिकों ने स्वदेशी तकनीकों का विकास शुरू किया।



यही वह समय था जब भारत ने यह समझ लिया कि विदेशी तकनीक पर निर्भर रहना राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरनाक हो सकता है। परिणामस्वरूप, भारत ने अपने परमाणु ईंधन चक्र, रिएक्टर तकनीक और मिसाइल कार्यक्रम को स्वदेशी आधार पर विकसित करना शुरू किया।

भारत की परमाणु यात्रा में मिसाइल कार्यक्रम का विकास भी अत्यंत महत्वपूर्ण था। परमाणु हथियार तभी प्रभावी होते हैं, जब उन्हें सुरक्षित और सटीक तरीके से लक्ष्य तक पहुँचाया जा सके। इसी उद्देश्य से भारत ने "इंटीग्रेटेड गाइडेड मिसाइल डेवलपमेंट प्रोग्राम" शुरू किया। इस कार्यक्रम के नेतृत्व में डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही। उनके नेतृत्व में पृथ्वी,

अग्नि, आकाश और नाग जैसी मिसाइलों का विकास किया गया। विशेष रूप से अग्नि श्रृंखला की मिसाइलों ने भारत को लंबी दूरी तक परमाणु हथियार ले जाने की क्षमता प्रदान की। डॉ. कलाम को "मिसाइल मैन ऑफ इंडिया" कहा जाने लगा और बाद में वे भारत के राष्ट्रपति भी बने।

1990 के दशक तक भारत ने परमाणु तकनीक और मिसाइल क्षमता में उल्लेखनीय प्रगति कर ली थी। इसी बीच पाकिस्तान भी चीन और अन्य देशों की सहायता से अपने परमाणु कार्यक्रम को तेजी से आगे बढ़ा रहा था। दक्षिण एशिया में सामरिक संतुलन तेजी से बदल रहा था। भारत को यह महसूस हुआ कि अब अस्पष्ट परमाणु नीति पर्याप्त नहीं है। इसी पृष्ठभूमि में मई 1998 में भारत ने पोखरण में पाँच परमाणु परीक्षण किए। यह अभियान "ऑपरेशन शक्ति" के नाम से जाना गया। उस समय प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी थे। अत्यंत गोपनीय तरीके से किए गए इन परीक्षणों ने पूरी दुनिया को चौंका दिया। भारत ने स्वयं को आधिकारिक रूप से परमाणु हथियार संपन्न राष्ट्र घोषित कर दिया।





पोखरण-॥ भारत के इतिहास में निर्णायक मोड़ साबित हुआ। अमेरिका और कई पश्चिमी देशों ने फिर से आर्थिक प्रतिबंध लगाए, लेकिन भारत इस बार अधिक आत्मविश्वास से भरा हुआ था। भारतीय अर्थव्यवस्था पहले की तुलना में मजबूत हो चुकी थी और देश आत्मनिर्भरता की दिशा में आगे बढ़ चुका था। कुछ वर्षों बाद विश्व समुदाय ने भारत की वास्तविकता को स्वीकार कर लिया। 2008 में भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच असैनिक परमाणु समझौता हुआ, जिसने भारत को वैश्विक परमाणु व्यापार में प्रवेश दिलाया। यह भारत की बढ़ती अंतरराष्ट्रीय प्रतिष्ठा का प्रमाण था।

भारत की परमाणु नीति हमेशा जिम्मेदारी और संयम पर आधारित रही है। भारत ने 'नो फर्स्ट यूज' की नीति अपनाई, जिसका अर्थ है कि वह पहले परमाणु हथियार का प्रयोग नहीं करेगा। भारत ने यह भी स्पष्ट किया कि उसकी नीति 'न्यूनतम विश्वसनीय प्रतिरोध' पर आधारित होगी। इसका उद्देश्य हथियारों की अंधाधुंध दौड़ में शामिल होना नहीं, बल्कि इतनी क्षमता रखना है कि कोई भी शत्रु भारत पर हमला करने का साहस न कर सके। यही कारण है कि भारत को विश्व स्तर पर एक जिम्मेदार परमाणु शक्ति के रूप में देखा जाता है।

भारत ने समय के साथ 'न्यूक्लियर ट्रायड' यानी परमाणु त्रिस्तरीय क्षमता भी विकसित कर ली। इसका अर्थ है कि भारत भूमि, वायु और समुद्र—तीनों माध्यमों से परमाणु हमला करने की क्षमता रखता है। अग्नि मिसाइलें, परमाणु सक्षम लड़ाकू विमान और आई.एन.एस. अरिहंत जैसी परमाणु पनडुब्बियाँ भारत की सामरिक शक्ति को अत्यंत मजबूत बनाती हैं। विशेष रूप से समुद्र आधारित परमाणु क्षमता किसी भी देश की प्रतिरोधक शक्ति को अत्यधिक विश्वसनीय बनाती है, क्योंकि पनडुब्बियाँ आसानी से खोजी नहीं जा सकतीं।

प्रभाव :

भारत की परमाणु शक्ति ने केवल बाहरी सुरक्षा ही सुनिश्चित नहीं की, बल्कि उसने भारत की विदेश नीति और रणनीतिक आत्मविश्वास को भी नई ऊँचाई प्रदान की। अब भारत वैश्विक मंचों पर अधिक मजबूती से अपने हितों की रक्षा करता है। संयुक्त राष्ट्र, जी-20 और अन्य अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भारत की भूमिका लगातार बढ़ी है। परमाणु शक्ति ने भारत को केवल सैन्य दृष्टि से नहीं बल्कि राजनीतिक और कूटनीतिक दृष्टि से भी मजबूत बनाया।

इसी सामरिक शक्ति और आत्मविश्वास का प्रभाव 'ऑपरेशन सिंदूर' जैसे अभियानों में भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। ऑपरेशन सिंदूर भारत की सुरक्षा नीति का महत्वपूर्ण अध्याय था, जिसमें भारत ने आतंकवाद और सीमा पार से उत्पन्न खतरों के विरुद्ध निर्णायक कार्रवाई



की। इस अभियान में भारत की पारंपरिक सैन्य शक्ति—सेना, वायुसेना और खुफिया एजेंसियों की प्रमुख भूमिका थी, लेकिन इसके पीछे भारत की परमाणु प्रतिरोधक क्षमता एक महत्वपूर्ण रणनीतिक सुरक्षा कवच के रूप में मौजूद थी।

परमाणु शक्ति का सबसे बड़ा प्रभाव प्रत्यक्ष युद्ध में नहीं बल्कि "डिटरेंस" यानी प्रतिरोधक क्षमता में होता है। इसका अर्थ है कि शत्रु यह जानता है कि यदि संघर्ष अनियंत्रित स्तर तक पहुँचा तो परिणाम उसके लिए भी विनाशकारी हो सकते हैं। ऑपरेशन सिंदूर के दौरान यही रणनीतिक संतुलन भारत के पक्ष में कार्य करता रहा। भारत को यह विश्वास था कि उसकी परमाणु क्षमता किसी भी बड़े सैन्य विस्तार को रोकने में सक्षम है। यही कारण था कि भारत अधिक आत्मविश्वास और दृढ़ता के साथ अपनी सैन्य रणनीति लागू कर सका। यदि भारत परमाणु शक्ति संपन्न राष्ट्र न होता, तो संभव है कि विरोधी देश व्यापक सैन्य प्रतिक्रिया देने का प्रयास करते। लेकिन भारत की परमाणु क्षमता ने





यह स्पष्ट संदेश दिया कि किसी भी प्रकार की आक्रामकता का उत्तर निर्णायक और विनाशकारी हो सकता है। इस मनोवैज्ञानिक प्रभाव ने ऑपरेशन सिंदूर के दौरान भारत की रणनीतिक स्थिति को मजबूत बनाया।

इस अभियान ने यह भी सिद्ध किया कि आधुनिक युद्ध केवल हथियारों से नहीं, बल्कि रणनीतिक संतुलन, तकनीकी श्रेष्ठता और राजनीतिक इच्छाशक्ति से जीते जाते हैं। भारत की परमाणु शक्ति ने इन तीनों क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसने भारतीय नेतृत्व को निर्णय लेने का आत्मविश्वास दिया, सेना को सामरिक सुरक्षा प्रदान की और विरोधियों को संघर्ष की सीमा समझने के लिए बाध्य किया।

चुनौतियाँ :

हालाँकि, परमाणु शक्ति के साथ अनेक चुनौतियाँ भी जुड़ी हुई हैं। परमाणु हथियारों की दौड़ क्षेत्रीय तनाव को बढ़ा सकती है। परमाणु कार्यक्रम अत्यंत महंगे होते हैं और विकासशील देशों के लिए आर्थिक बोझ बन सकते हैं। इसके अतिरिक्त परमाणु दुर्घटनाओं का खतरा भी हमेशा बना रहता है। फिर भी भारत ने जिम्मेदारी और संतुलन की नीति अपनाकर इन चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना किया है।

भारत ने परमाणु ऊर्जा का उपयोग केवल रक्षा के लिए नहीं, बल्कि विकास के लिए भी किया है। परमाणु ऊर्जा संयंत्र बिजली उत्पादन में योगदान दे रहे हैं। चिकित्सा क्षेत्र में कैंसर उपचार और रेडियोथेरेपी में परमाणु तकनीक का उपयोग हो रहा है। कृषि में बेहतर बीज और खाद्य संरक्षण तकनीकों के विकास में भी इसका योगदान है। इस

प्रकार, भारत ने यह सिद्ध किया है कि परमाणु विज्ञान मानव कल्याण का साधन भी बन सकता है।

आज भारत विश्व की प्रमुख परमाणु शक्तियों में शामिल है। उसकी परमाणु नीति शक्ति और संयम के संतुलन पर आधारित है। भारत ने कभी आक्रामक विस्तारवाद की नीति नहीं अपनाई, बल्कि अपनी परमाणु क्षमता को राष्ट्रीय सुरक्षा और वैश्विक शांति बनाए रखने के साधन के रूप में उपयोग किया है। ऑपरेशन सिंदूर जैसे अभियानों ने यह सिद्ध कर दिया कि भारत की परमाणु शक्ति केवल हथियारों का संग्रह नहीं बल्कि एक व्यापक रणनीतिक सुरक्षा प्रणाली का हिस्सा है, जो देश को आत्मविश्वास, सुरक्षा और अंतरराष्ट्रीय सम्मान प्रदान करती है।

निष्कर्ष :

अंततः यह कहा जा सकता है कि भारत की परमाणु यात्रा संघर्ष, संकल्प और आत्मनिर्भरता की प्रेरणादायक गाथा है। स्वतंत्रता के बाद एक कमजोर राष्ट्र से लेकर आज एक जिम्मेदार और शक्तिशाली परमाणु राष्ट्र बनने तक का सफर आसान नहीं था। इस यात्रा ने भारत को न केवल सैन्य दृष्टि से मजबूत बनाया, बल्कि वैज्ञानिक, तकनीकी और कूटनीतिक रूप से भी सशक्त किया। ऑपरेशन सिंदूर में भारत की सफलता के पीछे उसकी परमाणु शक्ति द्वारा प्रदान किया गया रणनीतिक संतुलन और आत्मविश्वास एक महत्वपूर्ण कारक था। भारत की यह यात्रा आने वाली पीढ़ियों को यह संदेश देती है कि वैज्ञानिक प्रगति, राष्ट्रीय एकता और दृढ़ इच्छाशक्ति के बल पर कोई भी राष्ट्र विश्व मंच पर सम्मान और शक्ति प्राप्त कर सकता है।

हिंदी किसी के मिटाने से मिट नहीं सकती। - चंद्रबली पाण्डेय





शम्भु शरण भारती
वरि. लेखापरीक्षा अधिकारी
(सेवानिवृत्त)

एक दौर बचपन का



एक दौर था, बचपन का
जब उड़ते हवाई जहाज को
दादी व नानी करती थी नमन
कहती थी देखो,
जा रहें हैं, पुरखे पूर्वज
हम भी दौड़ पड़ते थे,
पाने को स्वर्णिम दर्शन
निहारने लगते थे लगन से लगन।

एक दौर था बचपन का
गली के सभी बच्चे खेलते थे,
एक साथ कबड्डी लुका छिपि कितकित्
ना कोई जाति, ना कोई धर्म
ना कोई लड़का, ना कोई लड़की ।।

एक दौर था, बचपन का
दौड़ पड़ते थे, लूटने
उस कटी पतंग को, जो
आसमान से उतर रहा होता
खुशी से नाच उठता था
पाकर उसे अपने आगोश में ।

एक दौर था, बचपन का
खेल के मैदान, खाते थे कसम
जिनसे लेने का प्रतिशोध
अगले दिन उनसे ही
मिलने हेतु, मन रहता था विकल ।।

एक दौर था, बचपन का
बचपन में मन में उठता था
एक ही प्रश्न
बड़ा होकर क्या है बनना
जवाब अब मिला
फिर से है बच्चा ही बनना ।

क्योंकि बिना समझ के
भी, हम थे कितने सच्चे
वो भी क्या दिन थे
जब हम थे, प्यारा बच्चे।

बहुत जी तरसता है, एक
बार फिर से जीने को बचपन
एक दौर था, बचपन का।

एक दौर था, बचपन का
ना कल की चिन्ता
ना भविष्य का डर
ना कोई जिम्मेवारी
एक दौर था बचपन का ।।





लोक खेलों की लोकप्रियता में बदलाव

प्रस्तावना-

लोक खेलों की लोकप्रियता में आया बदलाव, एक कहानी की तरह लगती है, जो समय के साथ चल रहे सामाजिक और तकनीकी बदलावों ने ग्रामीणों और पारंपरिक खेलों को हटाकर आज के समय में आधुनिक और शहरी खेलों ने जगह ले लिया है। पहले, जहाँ संयुक्त परिवारों और खुले मैदानों में बच्चे गिल्ली-डंडा, खो-खो और कबड्डी जैसे खेल मिलकर खेला करते थे। वहीं एकल परिवार में पढाई के बढ़ते दबाव और मोबाइल तथा इंटरनेट के आगमन ने बच्चों की रुचि को बदल कर रख दिया है।

भारत एक ऐसा देश है जिसकी सांस्कृतिक धरोहर अत्यंत विविधतापूर्ण, पुरातन और समृद्ध है। यहाँ की लोक परंपराएँ न केवल जीवनशैली का हिस्सा रही हैं, बल्कि समाज को जोड़ने का माध्यम भी बनी हैं। इन्हीं परंपराओं के कारण लोक खेलों का स्थान अत्यंत विशेष रहा है। कविता, गीत, नृत्य की तरह लोक खेल भी सामाजिक जीवन की धड़कन में बसे हुए थे। ये केवल खेल नहीं थे, बल्कि सामूहिकता, सामंजस्य, श्रम, उत्साह और सामाजिक एकता के प्रतीक थे।

परंतु, बदलते समय के साथ हर परंपरा की तरह लोक खेलों को भी चुनौतियों का सामना करना पड़ा। आज जब तकनीक जीवन के हर क्षेत्र पर हावी हो चुकी है। जब मोबाइल गेम, वीडियो गेम, अंतरराष्ट्रीय खेल और व्यावसायिक स्पोर्ट्स बच्चों और युवाओं को आकर्षित कर रही है, तब स्वाभाविक रूप से लोक खेलों की लोकप्रियता में बड़ा परिवर्तन देखने को मिलता है। कभी गाँव की गलियों, चौपालों, बाड़ों, खेतों के किनारों, तालाबों के आस-पास या फिर मेलों और पर्वों के दौरान खेले जाने वाले ये खेल धीरे-धीरे जीवन से ओझल होते जा रहे हैं।

लोक खेलों की प्रकृति और स्वरूप-

लोक खेल वे खेल हैं जो किसी विशेष क्षेत्र, समुदाय या संस्कृति में पीढ़ी-दर-पीढ़ी खेले जाते हुए आज तक चले आए हैं।

लोक खेलों की विशेषताएँ-

- **सरल नियम :** इनमें कठोर नियम-कानून नहीं होते, बल्कि खेलने के दौरान ही नियम बनते-बदलते रहते हैं।
- **उपकरणों की सादगी :** अधिकांश खेल बिना किसी विशेष साधन के खेले जाते हैं, जैसे गिल्ली-डंडा, कबड्डी, लंगड़ी, पिट्ठू आदि।
- **स्थानीयता :** हर क्षेत्र के खेल स्थानीय जलवायु, संस्कृति और जीवन-शैली से जुड़े होते हैं।



चन्द्र भूषण कुमार
लेखापरीक्षक

भारत के प्रमुख लोक खेल-

भारत विविधताओं का देश है, इसलिए यहाँ के लोगों में भी लोक खेलों में अद्भुत विविधता है। भारत में कबड्डी, खो-खो, गिल्ली-डंडा, पिट्ठू, कंचे, लंगड़ी, रस्साकशी, मल्लखंभ और कुश्ती जैसे अनेक पारंपरिक खेल प्रचलित रहे हैं।



हिंदी भाषा के लिये मेरा प्रेम सब हिंदी प्रेमी जानते हैं। - महात्मा गाँधी





लोक खेलों का सामाजिक और सांस्कृतिक महत्व-

- **सामाजिक एकता का माध्यम :** लोक खेल समाज के सभी वर्गों को जोड़ते थे। हर जाति, धर्म, वर्ग, लिंग या आर्थिक स्थिति के आधार पर होने वाला भेदभाव खेल के मैदान से गायब हो जाता था। एक छोटे से गाँव में बच्चे, युवा और बुजुर्ग सभी किसी न किसी रूप में इन खेलों का हिस्सा हुआ करते थे।
- **शारीरिक और मानसिक विकास :** लोक खेल शरीर को चुस्त-दुरुस्त रखते थे। इनमें दौड़ना, कूदना, रणनीति बनाना, टीमवर्क करना आदि शामिल थे। इस कारण मानसिक फुर्ती, साहस और सहनशीलता भी बढ़ती थी।
- **नैतिक मूल्यों का निर्माण :** लोक खेलों के माध्यम से अनुशासन, टीम भावना, नियमों का पालन, हार-जीत को स्वीकार करने की क्षमता, सहयोग और मैत्री जैसे मूल्य बच्चों में सहज रूप से विकसित होते थे।
- **स्थानीय संस्कृति का संरक्षण :** लोक खेल अक्सर त्योहारों और मेलों से जुड़े होते थे, जैसे दही-हांडी, कलारीपयट्टु, कुश्ती, मल्लखंभ इत्यादि। ये खेल परंपराओं और सांस्कृतिक पहचान को जीवित रखते थे।

लोक खेलों की लोकप्रियता में गिरावट : कारणों का विश्लेषण-

- **तकनीकी युग और डिजिटल मनोरंजन :** आज का बच्चा मोबाइल फोन, वीडियो गेम, ऑनलाइन गेम, वर्चुअल गेमिंग और सोशल मीडिया पर पहले से ही व्यस्त रहता है। इन आधुनिक माध्यमों का आकर्षण इतना बढ़ गया है कि बच्चे खुली हवा, मिट्टी और मैदान से दूर होते जा रहे हैं।
- **शहरीकरण और खुली जगहों की कमी :** तेजी से बढ़ते शहरीकरण ने बच्चों के खेलने की जगहें

छीन ली हैं। क्योंकि पार्क सीमित हैं, बहुमंजिला इमारतों में रहने वाले बच्चों के पास खुला मैदान नहीं है एवं सड़कें भी सुरक्षित नहीं हैं। इससे लोक खेलों के लिए आवश्यकतानुसार बड़े मैदान की उपलब्धता कम हो गई।

- **आधुनिक खेलों का व्यावसायीकरण :** क्रिकेट, फुटबॉल, बैडमिंटन, टेनिस जैसे खेलों को मीडिया द्वारा अत्यधिक प्रचार मिलता है। इन खेलों से पैसा, ग्लैमर, करियर और पहचान, सब कुछ जुड़ा है। इसके विपरीत लोक खेल मीडिया की रोशनी से दूर रहते हैं, इसलिए युवाओं का रुझान आधुनिक खेलों की ओर बढ़ गया है।
- **शिक्षा प्रणाली का दबाव :** आज की शिक्षा प्रणाली बच्चों पर अधिक दबाव डालती है। ट्यूशन, कोचिंग, प्रोजेक्ट, परीक्षा, इन सबके बीच बच्चों के पास खेलने का समय ही नहीं बचता। लोक खेलों के लिए निरंतर अभ्यास और दोस्तों का समूह चाहिए, जो आज की व्यस्त जीवनशैली में कठिन हो गया है।
- **माता-पिता की प्राथमिकताएँ :** आज के समय में ऐसा माना जा रहा है कि लोक खेल समय का अपव्यय हैं। माता-पिता चाहते हैं कि आज के समय को ध्यान में रखते हुए इनके बच्चे कंप्यूटर, विदेशी भाषाएँ, कोचिंग और आधुनिक खेलों पर ही ध्यान दें।
- **सांस्कृतिक उपेक्षा और नीति का अभाव :** लोक खेलों को कभी भी राष्ट्रीय स्तर पर वह मान्यता नहीं मिली जो मिलनी चाहिए थी। इन खेलों के लिए न तो बड़े टूर्नामेंट होते हैं और न ही खिलाड़ियों को कोई प्रोत्साहन दिया जाता है। आज की सरकारों और संस्थाओं का ध्यान हमेशा अंतरराष्ट्रीय खेलों पर ही केंद्रित रहा करता है, जिस कारण लोक खेल की प्राथमिकता घटती चली गई है।
- **जनसंचार माध्यमों का प्रभाव :** टीवी, इंटरनेट



और ओ.टी.टी. प्लेटफॉर्म पर लोक खेलों का प्रसारण लगभग न के बराबर है। जब कोई खेल लोगों की नज़र से दूर हो जाए, तो उसकी लोकप्रियता स्वतः कम हो जाती है।

लोक खेलों की वर्तमान स्थिति-

अब भी भारत में लोक खेल पूरी तरह समाप्त नहीं हुए हैं। गाँवों में पर्व-त्यौहारों में, स्कूलों में, खेल दिवस के दौरान कुछ राज्यों के पारंपरिक खेल उत्सवों में इनकी झलक देखने को मिलती है। कुछ अपवाद खेल अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी पहुंचे चुके हैं, जैसे कबड्डी और खो-खो। प्रो कबड्डी लीग ने कबड्डी को नए रूप में प्रस्तुत किया है, जिससे यह युवा पीढ़ी को फिर से आकर्षित करने लगी है।

लोक खेलों के संरक्षण की आवश्यकता-

लोक खेलों का संरक्षण केवल एक परंपरा को बचाने का प्रयास ही नहीं है, बल्कि इससे समाज को अनेक लाभ मिल सकते हैं, जो निम्नांकित हैं :

- **स्वास्थ्य और फिटनेस का सरल साधन:** आधुनिक जीवनशैली में बच्चों के लिए शारीरिक गतिविधि बहुत कम हो गई है। लोक खेल एक स्वाभाविक व्यायाम का रूप हैं, जो स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी साबित होता है।
- **सामाजिक संबंधों को मजबूत करना :** लोक खेल, समुदाय, परिवार और दोस्तों के बीच आपसी संवाद और मेल-जोल को बढ़ाते हैं, जिससे संबंध मजबूत होते हैं।
- **तनाव मुक्ति और मानसिक संतुलन :** लोक खेल के समय खुलकर हँसना, दौड़ना, कूदना जैसी गतिविधियाँ स्वाभाविक रूप से तनाव को कम किया करती हैं।
- **सांस्कृतिक धरोहर का संरक्षण :** लोक खेलों का संरक्षण ही हमारी सांस्कृतिक पहचान और इतिहास को जीवित रखने का एक माध्यम है। लोक खेलों को पुनर्जीवित करने के उपाय-
- **सरकारी पहल और नीतियाँ :** राष्ट्रीय स्तर पर

परंपरागत खेलों को बढ़ावा देने वाली कई नीतियाँ बनाई गई हैं, जैसे स्कूलों में लोक खेलों को अनिवार्य रूप से शामिल करने के लिये कहा जाए, राज्यों में लोक खेल महोत्सव आयोजित किए जाएँ जिससे लोगों में खेल भावना को जागृत किया जा सके।

- **पाठ्यक्रम में शामिल करना :** एन. सी. ई. आर. टी. और राज्य बोर्ड अपने पाठ्यक्रमों में लोक खेलों के इतिहास एवं महत्व को शामिल करें, जिससे लोक खेलों की जिज्ञासा को बढ़ाया जा सके।
- **खेल मैदानों का विकास :** शहरों और गाँवों में खाली पड़ी सरकारी भूमि पर खेल के मैदान को विकसित किए जाएँ, ताकि वहाँ रहने वाले खिलाड़ी एवं आस-पड़ोस के रहने वाले खिलाड़ियों में खेल की उत्सुकता बनी रहे।
- **मीडिया और प्रसारण :** टीवी चैनल और सोशल मीडिया वालों को लोक खेलों को बढ़ावा देने के लिये लोक खेलों पर बने कार्यक्रम और प्रतियोगिताएँ दिखानी चाहिए।
- **स्कूल और कॉलेज स्तर पर आयोजन :** वार्षिक खेल दिवस में लोगों के प्रति लोक खेलों की प्रतियोगिताओं को अनिवार्य कर दिया जाना चाहिये। ताकि, लोगों में लोक खेलों के प्रति अभिरुचि को जगाई जा सके।
- **पारिवारिक और सामुदायिक पहल :** अभिभावक और समाज लोक खेलों को प्रोत्साहित करें। त्यौहारों और मेलों में पुराने सांस्कृतिक खेलों एवं नयी खेलों का आयोजन करें। ताकि, लोगों को हमारी सांस्कृतिक खेलों एवं नई खेलों के बारे में जानकारी मिल सके।
- **डिजिटल माध्यमों का उपयोग :** लोक खेलों के नियम, इतिहास और वीडियो ऑनलाइन उपलब्ध कराए जाएँ, ताकि नई पीढ़ी उन्हें देखकर उन



खेलों को सीख सकें।

लोक खेलों के भविष्य की संभावनाएँ-

लोक खेलों (पारंपरिक और स्वदेशी खेलों) का भविष्य अत्यंत उज्ज्वल और संभावनाओं से भरा है। आधुनिक पेशेवर लीग (जैसे प्रो कबड्डी) और सरकारी पहलों ने इन्हें ग्लैमर, पहचान और वित्तीय सुरक्षा प्रदान की है। लोक खेलों के भविष्य की संभावनाएँ निम्नांकित हो सकती हैं:

- **वैश्विक और पेशेवर मंच** : कबड्डी और खो-खो जैसे खेलों ने गाँव की गलियों से निकलकर अंतरराष्ट्रीय मंचों और पेशेवर लीगों में अपनी मजबूत जगह बनाई है। इससे खिलाड़ियों को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर आजीविका और पहचान मिल रही है।
- **डिजिटल और मीडिया विस्तार** : आधुनिक तकनीक, लाइव स्ट्रीमिंग और डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से लोक खेल अब शहरी और वैश्विक दर्शकों तक पहुँच रहे हैं। इससे इन खेलों में विपणन (मार्केटिंग) और प्रायोजन (स्पॉन्सरशिप) की अपार संभावनाएँ पैदा हुई हैं।

सरकारी और नीतिगत समर्थन : खेलो इंडिया जैसी पहलों के माध्यम से जमीनी स्तर पर पारंपरिक खेलों को पुनर्जीवित किया जा रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत ढाँचे (जैसे खेल मैदान और अकादमियों) के विकास से नई प्रतिभाओं को निखारने में मदद मिल रही है।

सरकारी नीतियाँ और पहल:

- **सरकारी सहायता** : आज के समय में ओलंपिक की मेजबानी जैसे बड़े लक्ष्यों के साथ, सरकार खेलों को प्राथमिकता दे रही है। जिससे कि अंतरराष्ट्रीय आयोजनों की मेजबानी के अवसर प्राप्त हो सकें।
- **बुनियादी ढांचा** : सरकार लोक खेलों के

बुनियादी ढांचे में सुधार पर जोर दे रही है, जिसमें अधिक खेलो इंडिया केंद्र और अकादमियाँ स्थापित करना शामिल है।

➤ आर्थिक और करियर के अवसर:

- **रोजगार** : खेलों में पत्रकार, कोच, ट्रेनर, कमेंटेटर और स्पोर्ट्स इवेंट मैनेजर इत्यादि जैसे विभिन्न करियर के विकल्प उपलब्ध हैं।
- **कॉर्पोरेट भागीदारी** : आज के समय में सार्वजनिक निजी भागीदारी और कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व (सी.एस.आर.) कोष जैसे वित्तीय माध्यमों से खेलों में निवेश बढ़ रहा है।
- **सामाजिक और व्यक्तिगत विकास:**
 - **शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य** : खेल टीम भावना, नेतृत्व और आत्मविश्वास जैसे महत्वपूर्ण कौशल विकसित करते हैं।
 - **समावेशिता** : लैंगिक समानता को बढ़ावा देने, महिलाओं को नेतृत्व की भूमिकाओं में लाने और सभी वर्गों के लिए खेलों को सुलभ बनाने पर जोर दिया जा रहा है।

उपसंहार-

लोक खेल केवल मनोरंजन का ही साधन नहीं हैं, बल्कि ये हमारी सांस्कृतिक धरोहर, सामाजिक एकता, शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य और सामुदायिक जीवन के प्रेरणादायक प्राण हुआ करते हैं। जरूरत इस बात की है कि हम अपनी परंपराओं को समझें, अपने बच्चों को इनके प्रति जागरूक करें। यदि ऐसा हुआ तो निश्चय ही लोक खेलों की खोई हुई लोकप्रियता फिर से लौट आएगी और ये खेल नई पीढ़ी के जीवन में वही आनंद, उत्साह और सामूहिकता लाएंगे जो कभी लाया करते थे।

हिंदी द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है। - स्वामी दयानंद





फलसफ़ा-1

ज़िंदगी जी कर देख लिया हमने,
जिंदा रहकर देख लिया हमने,
हंसा, रोया, बोला और मौन रह कर भी देख लिया हमने,
भर ज़िंदगी अभिनय किया हमने,
अपने आप को अपने में खोजा हमने,
दोस्त बना के देख लिया हमने,
दोस्त बन के देख लिया हमने,
पहचानने और जानने में फर्क समझा हमने,
ज़िंदगी दिया जिसने, खोया उसे हमने,
ज़िंदगी के फलसफे को समझने कि कोशिश की हमने,
दिन गुजारे, रतजगा किया हमने,
दूसरों की गलतियाँ ढूँढने में महारत हासिल की हमने,
आंकड़ों की खुदाई की हमने,



अशोक कुमार बरुआ

“उनवान”

वरि. लेखापरीक्षा अधिकारी
(सेवानिवृत्त)

ना-उम्मीदों में भी उम्मीदें देखी हमने,
अपने विचारों का विचार किया हमने,
दीवार में एक दरवाजा के अलावे एक खिड़की भी देखी हमने,
उससे झाँकने की कोशिश की हमने,
खुला आसमान, अनगिनत तारे, चांद को निहारा हमने,
उस तक पहुंचने की कोशिश की हमने,
अपने मनचाहे इस धरती पर लाए गए मासूमों की सिसकारी
देखी, सुनी और महसूस की हमने,
कुछ न कर पाने की, अपने अंतर्मन की धिक्कार सुनी हमने,
कोरे कागज में उकेरने की कोशिश की हमने,
हाँ, ज़िंदगी को जी भर के जिया हमने,
जिया, जिया बस जिया हमने,
इसी ज़िंदगी में और इसी ज़िंदगी से खुशी ढूँढी हमने ॥

हिंदी स्वयं अपनी ताकत से बढ़ेगी। - पं. नेहरू





बीस लाख की दुकान

काफी सोचने-समझने के पश्चात् अदिति ने अपने रिश्तेदार राजन जी को मोबाइल पर संदेश भेजा— "उस दुकान के बारे में विस्तार से बताइए।" रिश्तेदार काफी नजदीक का था, तो अदिति ने औपचारिकता का ध्यान नहीं रखा और बिना किसी संकोच के अपनी इच्छा प्रेषित कर दी। एक अदद आशियाने की तलाश में दोनों पति-पत्नी आकाश और अदिति कई बार अपने रिश्तेदारों और जान-पहचान वालों से अपनी इच्छा का इजहार कर चुके थे। महँगाई के इस दौर में उनके बजट के अनुसार एक आशियाना तलाश करना मुश्किल हो रहा था। इच्छा थी कि सेवानिवृत्ति के पश्चात् एक स्थायी ठिकाना हो, जहाँ बाकी की जिंदगी आराम और सुकून से गुजरे। चूँकि आकाश जी दो वर्ष पश्चात् सेवानिवृत्त होने वाले थे, तो उनकी इच्छा थी कि जितनी जल्दी हो सके एक स्थायी निवास का प्रबंध हो जाए।

इस बात की चर्चा अदिति ने अपने रिश्तेदार, आगरा में रहने वाले राजन जी से भी की थी। बातचीत के क्रम में एक बार उन्होंने ही बताया था कि वे जिस अपार्टमेंट में रहते हैं, उसके नीचे वाले तल पर एक दुकान है, उसे दुकान का मालिक बेचना चाहता है। अगर आप उसे ले लें, तो उसे किराये पर लगाकर हर महीने कुछ रकम (किराया) प्राप्त की जा सकती है। उन्होंने यह भी आश्वासन दिया था कि दुकान की देख-रेख वे कर देंगे और किरायेदार भी खोज देंगे। उस समय तो दोनों पति-पत्नी ने अपने विचार व्यक्त नहीं किए थे। परन्तु, जब स्थायी निवास का प्रबंध थोड़ा मुश्किल लगने लगा, तो दोनों ने सोचा कि दुकान खरीद ली जाए ताकि हर महीने कुछ रकम मिल जाए। इसी सिलसिले में अदिति ने राजन जी को संदेश भेजा था।

लगभग पंद्रह दिन पश्चात् भी जब राजन जी का कोई

जवाब नहीं आया, तो आकाश जी ने खुद ही फोन पर जानकारी लेना उचित समझा। उन्होंने फोन लगाया। औपचारिक बातचीत के पश्चात् उन्होंने दुकान के बारे में जानना चाहा।

पहले तो राजन जी ने अनभिज्ञता जताते हुए पूछा— "आप किस दुकान की बात कर रहे हैं?"

फिर जब आकाश जी ने उन्हें विस्तार से बताया, तो वे बोले— "अच्छा, याद आया! अरे वो दुकान तो है पर पता नहीं वो किराये पर लग भी पाएगा या नहीं, और अगर नहीं लगा तो आपके पैसे फँस जाएंगे। दूसरे शहर से आपको किरायेदार खोजने और दुकान की देख-रेख करने में भी परेशानी होगी।"

थोड़ा रुककर उन्होंने फिर धीरे से कहा— "और उसका दाम भी ज्यादा है।"

आकाश जी ने थोड़ा सोचा, फिर पूछा— "कितना दाम है?"

थोड़ी देर चुप रहने के बाद राजन जी ने फोन पर धीरे से कहा— "बीस लाख।"

आकाश जी ने राजन जी की धीमी और व्यंग्यभरी आवाज़ सुनी और सोचने लगे, "बीस लाख तो मैं दे ही सकता था।" फिर मुस्कुराते हुए धीरे से कहा— "बीस लाख... बीस लाख की दुकान।" और फोन रख दिया।

आकाश जी समझ चुके थे कि कोई कितना भी अपना हो, आपका भला नहीं चाहेगा। राजन जी को मुझे दुकान दिलवाने में क्या ही फायदा होता जो वे मेरे लिए परेशान होते! यही सोचकर आकाश जी पुनः अपने आशियाने की तलाश में लग गए।



ममता
पत्नी, श्री विकास कुमार,
उप. महालेखाकार (प्रशासन)

प्रशंसा पत्र

हि.क./हिंदीपत्रिकासमीक्षा/2020-21/हि.डा.क.25/14.09.2021

I/1470479/2026

कार्यालय महसूलाकर
(लेखापरीक्षा- I) पंजाब
प्लॉट नं. 21, सेक्टर
17 चंडीगढ़,
160017



No.:रा.अ./हिंदीपत्रिकासमीक्षा/2026-
27/1/1470479/2026
OFFICE OF THE ACCOUNTANT
GENERAL (AUDIT- I) PUNJAB
Plot No. 21, Sector 17,
Chandigarh- 160017
E-mail: agaupunjab1@cag.gov.in

Date: 09-06-2026

सेवा में

सहायक निदेशक (राजभाषा)
कार्यालय प्रधान महसूलाकर (लेखापरीक्षा) झारखण्ड,
रॉंची- 834002

विषय:- हिंदी पत्रिका 'उदयाचल' के 44वें अंक की समीक्षा।

महोदय/महोदया,

आपके कार्यालय से प्रकाशित पत्रिका 'उदयाचल' के 44वें अंक की प्रति प्राप्त हुई। पत्रिका प्रेषण हेतु धन्यवाद। इस पत्रिका में सम्मिलित सभी रचनाएँ सुपाठ्य, बोधगम्य तथा उच्चकोटि की हैं। पत्रिका की साज-सज्जा एवं विषयवस्तु का सुंदर प्रस्तुतिकरण अत्यंत प्रशंसनीय है। सभी रचनाएँ जानवर्षक एवं रोचक हैं। राजभाषा हिंदी की प्रगति की दिशा में पत्रिका का यह अंक एक सराहनीय प्रयास है।

पत्रिका के रचनाकारों एवं संपादक मंडल को सफल संपादन तथा प्रकाशन हेतु हार्दिक बधाई। पत्रिका के निरंतर उज्ज्वल भविष्य हेतु शुभकामनाएँ।

भवदीय

Digitally signed by
Sunil Kumar
Date: 09-06-2026
14:41:57

व.ले.प.अ. (राजभाषा अनुभाग)

रा.अ./09/पत्रिकासमीक्षा/2026

I/1472687/2026



कार्यालय महसूलाकर (लेखापरीक्षा-2), पंजाब,
चंडीगढ़-160017
OFFICE OF THE ACCOUNTANT GENERAL (AUDIT-II),
PUNJAB, CHANDIGARH
फोन : 0172-2772336, Email: agaupunjab2@cag.gov.in

क्रमांक: रा.अनु./पत्रिका समीक्षा/2026-27/1/1472687/2026 दिनांक: 10-06-2026

सेवा में

सहायक निदेशक (राजभाषा)
कार्यालय प्रधान महसूलाकर (लेखापरीक्षा) झारखण्ड,
रॉंची- 834002

विषय:- हिंदी ई-पत्रिका 'उदयाचल' के 44वें अंक की समीक्षा।

महोदय/महोदया,

आपके कार्यालय से प्रकाशित हिंदी ई-पत्रिका 'उदयाचल' के 44वें अंक की प्रति प्राप्त हुई। पत्रिका प्रेषण हेतु धन्यवाद। पत्रिका में प्रकाशित लेख, कविताएँ, संस्मरण तथा सामाजिक विषयों पर आधारित सामग्री पाठकों को ज्ञानवर्षक और प्रेरणादायक अनुभव प्रदान करती है। इसकी भाषा सरल, प्रभावशाली एवं सहज है, जिससे पत्रिका पाठक आसानी से जुड़ पाता है। आकर्षक साज-सज्जा, सुव्यवस्थित संपादन तथा विषयों की विविधता पत्रिका को विशेष बनाती है। राजभाषा हिंदी की प्रगति की दिशा में पत्रिका का यह अंक एक सराहनीय प्रयास है।

पत्रिका के रचनाकारों एवं संपादक मंडल को सफल संपादन तथा प्रकाशन हेतु हार्दिक बधाई। पत्रिका के निरंतर उज्ज्वल भविष्य हेतु शुभकामनाएँ।

भवदीय

SANJEEV KUMAR
व.ले.प.अ. (राजभाषा अनुभाग)

हिंदीकक्षा/पत्रिकाओंकीपावती/2024-25/36(2)

I/1472919/2026



ಮಹಾಅಲಯ (ಇ. ಸಾ. ಅ.) ಕಛೇರಿ, ಕರ್ನಾಟಕ, ಬೆಂಗಳೂರು
ಕರ್ನಾಟಕ ಸರ್ಕಾರದ ಅಧಿಕಾರ ವ್ಯಾಪ್ತಿ
ಮಹಾಅಲಯ (ಇ. ಸಾ. ಅ.) का कार्यालय, कर्नाटक,
भारतीय लेखापरीक्षा तथा लेखा विभाग
Office of the Accountant General (A & E), Karnataka
Indian Audit & Accounts Department



सं. म.ले.(ले.व ह.)/हि.क./2026-27/174

दिनांक:04.06.2026

सेवा में,

सहायक निदेशक (रा.भा.),
प्रधान महसूलाकर (लेखापरीक्षा) का कार्यालय,
झारखंड, रॉंची

विषय: हिंदी गृह पत्रिका "उदयाचल" के 44वें अंक की पावती प्रेषण के संबंध में।

महोदय/महोदया,

आपके कार्यालय द्वारा राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार हेतु प्रकाशित होने वाली हिंदी गृह पत्रिका "उदयाचल" के 44वें अंक की प्रति प्राप्त हुई। पत्रिका का आवरण पृष्ठ एवं साज-सज्जा अत्यंत आकर्षक है। पत्रिका में शामिल सभी रचनाएँ पठनीय एवं सराहनीय हैं। विशेष रूप से:- श्री मुकेश कुमार मं-1 का लेख - 'आठवें स्वर्ग', श्री नितेश कुमार का लेख - 'भाषा की विविधता', श्री विनोद कुमार प्रभात की कहानी - 'बरदान का फेर', सुश्री माया कुमारी की कविता - 'अनमोल रिश्ते', प्रशंसनीय हैं। कार्यालयीन गतिविधियों का छायाचित्र देख कर प्रसन्नता हुई। पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति व उज्ज्वल भविष्य के लिए हार्दिक शुभकामनाएँ।

भवदीय

Digitally signed by
Uday Pratap Singh
Date: 10-06-2026
16:27:32

सहायक निदेशक (राजभाषा)

P.B. No. 5329/5369, PARK HOUSE ROAD, BENGALURU 560 001.
Tel: 080-22379335 Fax: 080-22264691
<https://cag.gov.in/ae/karnataka/en>

हिंदीकक्षा/समीक्षा/4-10/2023-24/

I/1493600/2026



कार्यालय महालेखाकार (लेखा व हकदारी),
पंजाब एवं पु.टी., सेक्टर 17-ई, चंडीगढ़ - 160017.
Office of The Accountant General (A&E),
Punjab & U.T., Sector-17 E,
Chandigarh - 160017.
Phone: 0172-2702906, 2703117, 2709578
Fax - 0172-2702286
Mail: agaepunjab@cag.gov.in



सं. - रा भा अनु./पत्रिका समीक्षा/का-10/2025-26/1/1493600/2026 दिनांक: 29-06-2026

सेवा में,

सहायक निदेशक (राजभाषा),
कार्यालय प्रधान महसूलाकर (लेखापरीक्षा),
झारखण्ड, रॉंची

विषय: हिंदी गृह पत्रिका "उदयाचल" के 44वें अंक की पावती प्रेषित करने के संबंध में।

महोदय/महोदया,

आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित पत्रिका "उदयाचल" के 44वें अंक की ई-प्रति प्राप्त हुई। इस पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाएँ रुचिकर, भावयुक्त एवं उद्देश्यपूर्ण हैं। पत्रिका का आवरण पृष्ठ अति मनोहर एवं आकर्षक है।

पत्रिका में सुश्री माया कुमारी, उप महालेखाकार की रचना 'अनमोल रिश्ते', श्री मुकेश कुमार झा, लेखापरीक्षक की रचना 'ताना-बाना' तथा श्री सोनू कुमार सिंह, डाटा एंटी ऑपरेटर की रचना 'मैं के ऑंचल से गंगा तक : एक आत्मिक यात्रा' विशेष रूप से प्रशंसनीय हैं। पत्रिका को सुरुचिपूर्ण एवं उपयोगी बनाने हेतु संपादकीय परिवार ने पूर्ण प्रयास किए हैं।

पत्रिका के सभी रचनाकारों एवं संपादक मंडल को पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए बधाई एवं पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति के लिए शुभकामनाएँ।

यह पत्र उपमहालेखाकार (प्रशा.) महोदया के अनुमोदन से जारी है।

भवदीय

Digitally signed by
Devendra Singh
Date: 29-06-2026
16:03:39

व. लेखा अधिकारी
(राजभाषा)



विश्व पर्यावरण दिवस के पानन अवसर पर वीधारोपण करती उप महालेखाकार महोदया।

कार्यालय परिसर में आयोजित स्वास्थ्य शिविर का निरीक्षण करती प्रधान महालेखाकार महोदया।



सेवानिवृत्ति की झलकियाँ



विश्व पर्यावरण दिवस के अवसर पर वीधारोपण करते हुए उप महालेखाकार।

